16766

2

* जय श्रीमन्नृत्यराघवाय नमः *

अनन्त श्रीविभूषित श्रीमद्रामसखेन्द्र निध्याचार्य्यजी
महाराज द्वारा
(सुप्रसिद्ध रामसखा)
प्रणीत

नृत्यराघव मिलन

प्रकाशक—
विविध यज्ञ संयोजक महान्त पट
श्रीसियाशरणजी महाराज
नृत्यराघवकुञ्ज वासुदेवघाट श्रीअयोध्याजी ।

सम्वत् २०११ अषाढ़ गुरुपूर्णिमा मूल्य सदुपयोग

श्रीहनुमत प्रेस, श्रीअयोध्याजी ।

श्रीसीताराम चरणचिन्ह

श्रीरामचन्द्र नख चन्द्र चारु अति, चरण कमल दोऊ भ्राजैं।
कमठ पीठ सम परम मनोहर, कारा रङ्ग रुचि राजैं॥
अरुण तरुण सम सुभग चरण तल, रेख वेष दोऊ सोहै।
रथ ध्वज अष्ट कोन हल मुशल, श्री अम्बर मन मोहै॥
चमर छत्र नर कञ्ज अष्टदल, अंकुश मीनहि लेखो।
पवि स्वस्तिक सुन्दर सिंहासन, मुकुट चक्र रवि पेखो॥
सर्प वाण यमदंड उर्ध्व शुभ, दक्षिण पद जयमाला।
बायें पद गोपद सरयू क्षिति, अर्ध त्रिकोण त्रिशाला॥
जीव आत्म तँह बिन्दु शक्ति युक्त, काम बान बिधु राका।
जम्बू फल षटकोण अर्ध शशि, शंख गदा सुपताका॥
त्रिवली बीन चन्द्रिका बंशी, सुधा कुंड धनु हंसा।
तुण सहित उनचास चिन्ह ये, दुख दल करण विध्वंसा॥
जे दक्षिण पद रेख कुँवर के, ते कुमारि के बायें।
रामसखे भव भूलि जात उठि, सुमिरि प्रात के गाये।

❀ भूमिका ❀

भद्र पाठको ! इस असार संसार में प्राय: जितने भी महापुरुष, महान आत्मा संसार तथा आत्मोद्धार के निमित्त प्रगट होते आये हैं वे कृपा करके निज अनुभवों को साधारणतया सांसारिक जीवों के मार्ग प्रदर्शन व हित के लिये तथा प्रेमी भावुक रसिक महात्माओं के कल्याण के लिये-इसी प्रकार अपनी अनुभव रूपी ज्ञान गुदड़ी से निकाल कर देते रहे हैं। हमारे परम पूज्य आचार्य्य प्रवर श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्यजी महाराज का यह ग्रंथ एक अमूल्य रत्न है जो रसिक महानुभावों के सभी शंकाओं को समाधान करते हुए हृदय में भक्ति रस की धारा बहा देता है।

आज कल इस ग्रंथ का मिलना दुर्लभ हो गया है। अत: हमारे पूज्यपाद परम गुरुवर्य षट श्रीमहान्त श्रीसरयूशरणजी महाराज जी ने मेरे को यह आदेश प्रदान किये कि इस ग्रन्थ को प्रकाशित करना नित्तान्त आवश्यक है मुझे भी इसके लिये उत्साह बना रहा, बड़ी कठिनता से एक छपी हुई पुरानी प्रति मिली भी तो प्रेस सम्बन्धी दोषों से अर्थात् प्रूफादि ठीक से नहीं देखे जाने के कारण पाठ में बहुत अशुद्धियाँ रह गयी थी फलत: अधिकांश जगहों में भाव नहीं बैठते थे।

अब मैं इस संस्करण में परिव्राजक परमहंस श्री १०८ पं० श्रीसीताप्रसाद शरणजी महाराज "सखा" तथा परम पूज्य पं० प्रवर अनन्त श्रीअवधशरणजी महाराज "वालमीकि" आदि के हस्तलिखित प्रत्तियों के अधार पर जितना अधिक शुद्ध पाठ मिला, शोधकर पाठकों के समक्ष उपस्थित कर रहा हूँ। यद्यपि मैंने संशोधन में सावधानी रक्खी है तथापि भूलना मनुष्य स्वभाव होने से त्रुटियां अवश्य रह गईं होंगी। अत: विज्ञ रसिक विद्वान महानुभाव उन त्रुटियों को कृपया सुधार लेंगे और प्रेमपूर्वक इसका पठन पाठन करके हमारे इस परिश्रम को सफल करेंगे।

विनीत—

सियाशरण

16766

नृत्यराघव मिलन का

॥ शुद्धाशुद्ध पत्र ॥

नं० पृष्ठ	नं० पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	१४	लगन	लगत
४	५	दुति	द्युति
६	१७	द्विभुज	द्विभुज
७	३	कुछ	कछु
७	८	बीव	बीच
११	२	छुठत	छुटत
११	१५	पराब्ध	परारब्ध
१४	३	लेखहिं	लेखहिं
१४	१०	भुवहीं	भनहीं
१४	१३	विंच	बिच
२०	१	सुखकारा	सुखकारी
२३	५	प्रम	प्रेम
३२	१	विविघ	विविध
३३	८	चित्रकुट	चित्रकूट
३६	१७	कबुतर	कबूतर

* ग्रन्थकारजी का संक्षिप्त परिचय *

अनन्त श्रीविभूषित परमाराध्य प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद श्रीमद्रामसखेन्द्र निध्याचार्य्यजी महाराज भगवान श्रीरामभद्र जू के परम प्रिय सखा थे। आप जयपुर (राजस्थान) के कुलीन गौड़ ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुये थे और बाल्यावस्था से ही भगवत भागवतनिष्ठ तथा भावुक प्रकृति के थे। सर्व प्रथम जयपुर गलितागादी में आप लखनलालजी का पार्ट लेकर सख्य भाव का अद्भुत परिचय दिये और उसी समय भगवान श्रीरामभद्रजी ने आपको अपना सखा मानकर गलिता के श्रीआचार्यचरण को विदित करा दिये। तब से आप श्रीरामसखाजी कहकर पुकारे जाने लगे।

तत्पश्चात् आप अनेक तीर्थ स्थानों में भ्रमण करते हुये दक्षिण स्थित स्थान उड़पी में पहुंचे और वहाँ के आचार्य्यचरण श्रीगुरू वशिष्ठ तीर्थ जी महाराज से भगवान श्रीरामलालजी की उपासना भावना प्राप्त करके श्रीगुरुदेवजी की सेवा में कुछ दिन रहकर श्रीअयोध्याजी आये और बासुदेवघाट के एक सुरम्य स्थान पर बैठकर अपनी उपासना भावना का प्रचार करने लगे। आज उसी स्थान का नाम "नृत्यराघवकुञ्ज" करके प्रसिद्ध है। आपने यहां विक्रम सं० १८०४ में नृत्यराघव मिलन ग्रंथ लिखे और निज सिद्धान्त को अटल किये श्रीअवध के संत महात्मा व सद्गृहस्थ आपको सिद्ध शिरोमणि तथा भगवान श्रीरामजी के प्रिय सखा मानते थे। आप विन्दुसम्प्रदायाचार्य अनन्त श्रीविभूषित बाबा श्री रामप्रसादजी महाराज के समकालीन थे वर्तमान काल में भी इस सख्य भाव का ज्वलन्त उदाहरण भगवान श्रीधनुषधारीजी महाराज हैं जो स्थान बड़ीजगह में विराजमान है।

जव श्रीअवध में भारी भीड़ होने लगी तव श्रीचित्रकूट प्रमोदबन में आकर द्वादश वर्ष पर्य्यन्त निवास किये। यहां पर आपकी बड़ी भारी सिद्धी प्रसिद्धी प्राप्त हुई चित्रकूट का चमत्कार अतिशय भावपूर्ण है तत्पश्चात् मैहर स्टेट में नीलमती गङ्गा के किनारे कुटी बनाकर मानसिक ध्यान पूजा, भगवत-भागवत सेवा करते हुए अपने परम प्रिय सखा भगवान श्रीरामजी से मिलने के लिये साकेतधाम पधार गये। श्रीमद्रामसखेजी महाराज का रहस्यमय विस्तार जीवन चरित्र 'श्रीरामसखे चरितामृत'' नामक पुस्तक में लिखा है। जिज्ञासु पाठकों के जानकारी के लिये इस दीन ने सूचित किया है।

विनीत—

सियाशरण

ए दोउ चन्दा बसो उर मेरे।
दशरथ सुत अरू जनक नन्दनी, अरूण कमल कर कमलन फेरे॥
बैठे सघन कुञ्ज सरयूतट, आस पास ललना गण घेरे।
चन्द्रवती सिर चमर डुलावत, चन्द्रकला तन हँसि हँसि हेरे॥
ललित भुजा द्वै अंग परस्पर, झुकि रहे केस कपोलन नेरे।
श्रीरामसखे छबि कहि न परत तब, पान पीक मुख झुकि झुकि गेरे॥
ए दोउ चन्दा बसो उर मेरे।

ग्रन्थकार—

अनन्त श्रीविभूषित श्रीमद्रामसखेन्द्रनिध्याचार्यजी महाराज,

(सुप्रसिद्ध रामसखा)

नोट-श्रीआचार्य्यचरण का यह चित्र उपदेशावस्था का है।

❋ श्रीमन्नृत्यराघवाय नमः ❋

नृत्यराघव मिलन

❋ प्रारम्भः ❋

दोहा–करि उर ध्यान वशिष्ठ गुरू, राम सखे मृदु शील।
भनौं नृत्य राघव मिलन, अद्भुत रँगन रँगील॥
विविध केलि युत प्रेमघर, रूप द्रब्य भण्डार।
विमल नृत्य राघव मिलन, रसिकन कर अधिकार॥
श्रुति सम्मति अरु युक्ति करि, और जगत उनमान।
सुनि जिय ईश अखंड तन, तामै निज विज्ञान॥

प्रथम कहौं यह तत्त्व विचारा। ता करि होइ इष्ट प्रण भारा।
तत्त्वमसी श्रुति वाक्य प्रधाना। तत् अब्यय षष्ठी अस्थाना
कहत झूठ जे जिय परिणामा। तिनके संग न करि विश्रामा
जिय विनु ईश नाम नहिं लहिये। तौ अनीश वादी वे कहिये
वे जग गुप्त सेवरा जानहु। उनकी कहनि कदापि न मानहु
श्रुति कह इक ब्रह्म द्वितियो नाहीं। तासु हेत यह गुणि मन माहीं
ब्रह्म बृहद् याते इक कहिये। दूसर जिय लघु तुल्य न लहिये

जियन बीच व्यापक ब्रह्म सोई। जिय बिनु ब्रह्म नाम नहिं होई
ब्रह्महिं जीव भयो वे गणहीं। तौ अस पाप सुनत नहिं बनहीं
निर्विकार ब्रह्म कह सब वेदा। जिय नानात्व भरयो बहु खेदा
दो०--कहत सु जे अज्ञान वस, प्रति बिम्बादिक न्याय।
लगत बुधन सुनि शिष्य ये, मिथ्या सकल उपाय ।।
प्रति बिम्बहिं सुख दुःख नहिं होई। जिय को सुख दुख व्यापय दोई
निर अवयव ब्रह्म को वे गावहिं। तौ प्रति बिम्ब न्याय नहिं पावहिं
निर अवयव नभ की परछांहीं। तौ वे कहँ परै जल माँहीं
यह उनको मत मनहिं न भावै। बिनु सावयव छाँह नहिं आवै
पञ्च तत्त्व आतम उपजाये। सो सावयव वेद अस गाये
सो उपजै उपजावै सोऊ। सो सावयव जानिये दोऊ
पञ्च तत्त्व ते पंच रचित मणि। हरित पीत सित श्याम रक्त मणि
जल मणि श्वेत भूमि मणि पीता। अग्नि रक्त मणि परम पुनीता
हरितपवन मणि नभ मणि श्यामा। ये पाँचौ अद्भुत अभिरामा
इन सबकी वैजयन्ती माला। पहिरहिं राम श्याम छवि जाला
दो०--वेद कह्यो सावयव नभ, नील बरण सो सत्य।
बिन समझे निरवयव उन, कहेऊ सो जानि असत्य।।
सर्व देशी निर वयव ब्रह्म, एक और नहिं कोय।
वाके मत प्रतिबिम्ब की, युक्ति कवन विधि होय ।।

चौ०-इक देशी सावयव जू होई। यथा तरणि चन्द्रादिक जोई
सजल कलश आदिक जब सोहैं। तब प्रति विम्ब नरादिक जोहैं
पुनि वे निर्विशेष ब्रह्म ठानहिं,। तापर वृथा वचन श्रुति आनहिं
निज प्रति विम्ब मुकुर महँ हेरहिं। वाकँह कोउ उपदेश न प्रेरहिं
वाको सबहिं बावरो जानहिं। वाके वचन कबहुँ नहिं मानहिं
ईश जियन उपदेशहिं ज्ञाना। कहिये कस ईश्वर अज्ञाना
ईशहिं सब सर्वज्ञ जू भाषहिं। ईश बचन कबहूँ नहिं नासहिं
तृजग योनि ईश्वर अवतारा। मत्स्य कच्छ शूकर बपुधारा
तहूँ ईश श्रुति अस्तुति ठानहिं। तृजग योनि जिय को को मानहिं
जीव बिवश ईश्वर आधीना। पुनि माया बश भयो अति दीना

दोहा-जिय ईश्वर कर सखा निज, यासें नहिं सन्देह।
जग रति करि प्रभु को बिसरि, धरत अनेकन देह ॥
स्वर्ग नरक में फिरत जिय, बँध्यो शुभाशुभ कर्म।
ब्रह्म जु सदा स्वतन्त्र है, लगब न कर्म अकर्म ॥
जियको करयो न होत कछु, ब्रह्म करहिं सो होइ।
जिय अनीश ब्रह्म ईश जग, कहिये एक न दोइ ॥
प्रभु के एक स्वरूप महँ, दीन्हीं भृगु उर लात।
ठहरी जा जा रूप महँ, सो सब एकहिं गात ॥

सौभरि ऋषि इक रूप बहु, सुख दुःख एक समान।
जिय अनेक इक होय कस, सुख दुःख आनहिं आन॥
जिय ब्रह्म होतौ एक कहुँ, तौ तुरीय जिय मुक्ति।
हनुमतादि क्यों पावते, भिन्न रूप रस भुक्ति॥
रावण जिय कढ़ि तेज मय, दामिनि ज्यों दुति छाय।
सबके देखत रामके, गयो जो तेज समाय॥
तेजवान नहिं होत तौ, तेज न परतो दृष्टि।
मिलतौ तो शिशुपाल किमि, होतौ पुनि या सृष्टि॥
पाय मुक्ति सायुज्य हूँ, जिय ब्रह्म एक न होत।
रहै नदी ज्यों सिन्धु मिलि, पृथक स्वाद जल सोत॥
नीर क्षीर दीषत मिले, हंस करहिं तेहिं भिन्न।
त्यों जिय ब्रह्म द्वै जाति बुध, लखत कुमति करि छिन्न॥
रहत पृथक ब्रह्म लीन जिय, सुधि स्वरूप नहिं आइ।
ज्यों सुषुप्ति सुख पाय जिय, बिसरि अपनपौ जाइ॥
भनत मुक्ति सायुज्य में, द्वै कुल को अधिकार।
रूक्ष सिद्धि जे तम भरे, और असुर जग भार॥
जिय ईश्वर घट मठ गगन, ब्रह्म बृहद आकाश।
फूटै घट मठ कहत वह, रहत एक नभ भाश॥

एक ब्रह्म आकाश वत, ताको लगी उपाधि ।
छुटै कौन को भजन करि, यह अति रोग असाधि ॥
निरइच्छित निरवैव ब्रह्म, उनहीं की यह उक्ति ।
ताहि अविद्या कस लगी, समुझि कहत नहिं युक्ति ॥
तजि स्वरूप लहि अलख वह, करत लक्षणा तीर ।
बिन प्रभु गंगा तट तहाँ, नहिं जग घोष अभीर ॥
कल्पत शून्य बिवाद वह मिथ्या युक्ति बनाय ।
माया वादिन सेवरन, भेद न तनिक दिखाय ॥
कहत जगत भ्रम आपहूँ, आयो भ्रम के बीच ।
ब्रह्म ज्ञान हूँ भ्रम परयो, करत बिचार न नीच ॥
नीर हेम मृण लहरि घट, कुण्डल घाट अनेक ।
गये उपाधि पटात्त वह, रहत जू व्यापक एक ॥
निर उपाधि हूँ रहति है, जल हिम मृण साकार ।
वाके मत निरवैव की, नेक न बनत बिचार ॥
आदि अन्त मधि जीव है, ज्यों कनकादिक जानि ।
सो सावैव जुहै सदा, बन्ध मोक्ष अनुमानि ॥
सा अवैव प्रभु ते भये, जिय सावैव अपार ।
होत नहीं निरवैव तें, साअवैव संसार ॥

देह देह ते होत जिमि, लखि प्रत्यच्छ उत्पन्न ।
गुणन मध्य पुनि भेद मुनि, वदत बेद वितपन्न ॥
जगत बीज निज राम इक, द्विभुज श्याम नृप रूप ।
प्रणव वेष कृत भनत श्रुति, अच्छर तासु अनुप ॥
उपज्यो जग रघुनाथ ते, याते द्विभुज प्रत्यच्छ ।
पुनि प्रसिद्ध नृप होन की, होत जियन को लच्छ ॥
नारायण तनु चतुर्भुज, कृष्ण त्रिभंगी ग्वाल ।
जगत न इनकर नकल है, राम नकल जग चाल ॥
करि श्रृङ्गार गज चढ़न की यह सबके मन चाह ।
गो चारन बन फिरन की, चाह न कहुँ जग माह ॥
द्विभुज राम जो शुद्ध तन, सो निज रसिकन लीन ।
रूच्छ भक्त तिन हेतु पुनि, रूप चतुर्भुज कीन ॥
राम राज मन ध्यावई, मन गृहस्थ गोपाल ।
भजत विष्णु जे रूच्छ मन, काटत सब भव जाल ॥
स्वतः सिद्ध जिय राज मन, भनत सन्त जग हेरि ।
पुनि चाहत तस करत प्रभु गृहस्थादि सब प्रेरि ॥
ब्रह्मादिक को मूल तनु, निज पद द्विभुज बखानि ।
धारयो तनु पुनि बिपुल करि, राम हँसन हित जानि ॥

रघुपति संगी सखा निज, मनुज स्वरूप अनादि।
भए भक्ति उत्कर्ष हित, पुनि कुयोनि शेषादि ॥
निराकार नहिं वस्तु कुछ, यह सिद्धान्त निदान।
हाऊ जिमि ठहरात ब्रह्म, लख्यो न जान अजान ॥
तामस तनु जे असुर गण, करत ब्रह्म को ध्यान।
सो यह सून्य बिचारि हैं, निन्दत संत सुजान ॥
रजत शुक्ति भ्रम सर्प रजु, लखि मरीच को तोय।
ब्रह्म बीच तिमि जगत भ्रम, कहत असुर मति खोय ॥
विवृत्ति वाद की रीति यह, कहत जु वह अति मूढ़।
समुझत नाहि कुबुद्धि वस, श्रुति आशय अति गूढ़ ॥
साँचों अहि जाने बिना, भ्रम न होय रजु पेखि।
ऐसेहि जल रजत गति, शुक्ति किरण रबि लेखि ॥
सत्य जीव को होत भ्रम, सत्य जगत के माँहि।
सत्य प्रकृति कृत भ्रम है, झूठो एकहु नाहिं ॥
ब्रह्म सजाती भेद करि, और बिजाती भेद।
स्वगत भेद करि रहत है, अस वह कहत अभेद ॥
मूल राम ब्रह्मता विषय, तीनिहुं भेद प्रसिद्धि।
ब्रह्मादिक अङ्ग ते भए, स्वगत भेद यह सिद्धि ॥

मत्स्यादिक अवतार सब, जानि सजाती भेद।
जीव विजाती ईश ते, ऐसे गावत वेद ॥
प्रकृति विजाती जीव ते, जड़ रूपा जग जाल।
प्रगट तीनहुँ भेद ये, प्रभु में लखत न बाल ॥
मिटहिं न जब लगि प्रकृति कृत, भ्रान्ति जनित ब्योहार
वाके मति गुरु शिष्य को, तब लगि भेद उचार ॥
और युक्ति यह कहत वह, पर्यो प्रकृति अंधियार।
करत गुरू उपदेश कछु, तब लगि भ्रान्ति लगार ॥
एक ब्रह्म जान्यो गुरू, तऊ पूर्व अभ्यास।
द्वैत भ्रान्ति है जात वह, कहत लगत सुनि हास ॥
निविड़ भ्रान्ति अति शिष्य को, गुरुहूँ को कछु लेश।
भेद दृष्टि महँ तुल्य दोउ, नहिं कोउ न्यून विशेष ॥
ब्रह्म रूप इक लखत गुरू, द्वैत शिष्य को मान।
भेद बड़ो सम होहिं कस, अस वह करत बखान ॥
ज्ञानी कहँ नहिं दूसरो, अधिकारी नहिं अज्ञ।
वाके मत नहिं बनत है, ब्रह्म उपदेशन यज्ञ ॥
एक चान्द निरद्वन्द है, नयन दोषलखि दोय।
देखत द्वी को कहत वह, सांच न गुरु मन सोय ॥

सब दिन देख्यो एक शशि, साँच सोई गुरू ध्यान।
तनिक दोष दृग करत वह, द्वै शशि तबहि दिखान ॥
ता छिन में उपदेश करि, हरत शिष्य को भेद।
जगत झूठ करि कहत वह, दीन्हो ज्ञान अभेद ॥
जो दृग दोष न साँचतौ, द्वै शशि लखत न ब्योम।
देख्यो सो नहिं साँचतौ, कहै कौन द्वै सोम ॥
श्रोता साँच न होय तो, कहै कौन सो बयन।
दोष कौन में होय जो, होइ न सांचे नयन ॥
शिष्य साँच गुरू साँच हैं, झूठन जिय तन बान।
बँध्यो शिष्य साँची प्रकृति, छोड़त गुरू दै ज्ञान ॥
साँच ईश जिय दृश्य जो, झूठ दृश्य नहिं होइ।
ब्रह्म बाँझ सुत फूल नभ, शशा सींग किन जोइ ॥
वादि भ्रान्ति कृत आदि वह, कहत होत सब फीक।
द्वैत ज्ञान सावैव बिनु, लगत न एकहु ठीक ॥
ब्रह्म लीनता कथनविधि, उपमा अरू उपमान।
एक ब्रह्म निरवैव में, बनत न युक्ति वखान ॥
त्रीसत्या जाग्रत स्वपन, दोउ ब्यवहार विलात।
परमारथ में कहत वह, एक ब्रह्म रहि जात ॥

ज्ञान भये इक रहत ब्रह्म, मिटत जीव नानत्त्व।
जगे स्वप्नजिमि झूठ सब, कहत मूढ़ असतत्त्व॥
रहतन तहाँ वेद मुनि सन्ता। कौने कह्यो रह्यो ब्रह्मअन्ता
जो वह कहे कि वेद बतायो। रह्यो ब्रह्म तहँ भेदहि आयो
एक ब्रह्म दूजो तहँ वेदा। तौ कस करि वह कहैं अभेदा
अपने मुख वह आपुहिं हारहिं। मिथ्या ही सब युक्ति उचारहिं
दो०-मन वच तन कृत कहत वह, यह ब्यवहार बिकार।
भनत ब्रह्म तेहि बचन पुनि, नहि सांकर्य्य बिचार॥
उनको कह्यो कहै जो ज्ञाना। तो ब्रह्म कहँ आवहि अज्ञाना
लगत अविद्या ब्रह्महिं आई। तो कासों वह जाय छुड़ाई
होय ब्रह्म को नास बनाई। तौ पुनि शून्य शेष रहिजाई
याते भिन्न ब्रह्म को करिये। सकल अविद्या जियपर धरिये
तौ प्रभु भजै यांनि जिय कोई। ईश्वर सखा शुद्ध पुनि होई
ज्यों वटं बीज जीव ब्रह्म तैसे। दोउ अनादि कहैं श्रुति ऐसे
तरु समान खग द्वै तनुधारी। हैं दोउ सखा पृथक गति चारी
जिय साकार ब्रह्म साकारा। दोउ चिदघन जिय लगेउ बिकारा
पञ्च तत्त्व आदिक जड़ माया। ताकरि रचित तीन पुर काया
बिषय हेतु जिय तिन पुर माहीं। रह्यो लुकाय दरश जग नाहीं

दो०--निकसत पैठत प्रकृति तन, साक्षैव जिय रूप ।
लखि न परत लागत छुठत, जिमि जग भूत स्वरूप ॥

भूत शक्ति इतनी जग करई । दृष्टि परत कहुँ दृष्टि न परई
ज्यों जिय जगत न देत दिखाई । देखि परहिं पुनि गोपुर जाई
मुक्त जीव जे गोपुर वासी । राजत नित किशोर सुख रासी
देही देह विभाग न जिनको । तुरिया जीव दरश है तिनको

दो०--नित्य मुक्त जिय रूप जो, सो जिय रूप प्रमाण ।
सो तुरिया जु किशोर तनु, गावत वेद पुराण ॥
कामादिक जो जीव सब, रघुकुल बाल पुनीत ।
सारङ्गी निज द्विभुज सोई, नित्य मुक्त हरि मीत ॥

भूत स्वरूप एक जो कारण । पुनि बहु रूप करत वह धारण
ऐसे जीव रूप निज एका । व्है रूप पुनि होत अनेका
नवल किशोर पुरुष जिय मूला । सोइ लघु ह्वै जग अंग अनुकूला
छुटहिं माया के तन तीनों । तब लखि परहिं जीव सुख भीनों
पराब्ध भुक्तहि अस्थूला । तन यह छुटहिं भर्यो बहुशूला
गुरु संगति लहि आत्म ज्ञाना । छुटहि लिङ्ग शरीर प्रमाना
राम मिलन विरहानल छावै । तब कारण शरीर जरि जावै
रहहि महा कारण जिय रूपा । मुक्ति रूप तब होय अनूपा

निज तनु धारि जीव रस नायक । प्रभु सम रूप किशोर अमायक
तब गोलोक राम संग खेलहिं । सखा जानि भुज में भुज मेलहिं
पुनि गहि रहत राम को अङ्कहिं । बिछुरि मिल्यो जानों धनरङ्कहिं
कहुँ प्रभु को पतिकरिहियलावहिं । तिय गण ह्वै अति रसउपजावहिं
कहुँ मधु ऋतु ह्वैप्रभुकहँलोभहिं । कोकलादि बहु तनु धरि सोहहिं
चाहहिं तौ बहु रूप सदाई । राखहिं वह जिय प्रभु की नांई
सखा मूल जिय पुरुष श्यामघन । जोई प्रभु जिमि धरत विविध तन
प्रभु समान अति शक्ति प्रचंडा । चाहहिं तौ नित रचहिं ब्रह्मंडा
तुरिया तन जिय अद्भुत दरसन । कहतन बनत रूप बिधि वरणन
लीन्हें शर धनु अति चित चोरा । मनुज रूप जिय द्विभुज किशोरा

दो०-राम धनुष-धरते भयो, काम धनुष-धर बीर ।
याते द्विभुज मूल जिय, मूल धनुष कर तीर ॥

सोहत मणि सिंहासन प्रभु सम । रत्न छत्र सिर धरे अनूपम
कोटिन तिय सेवहिं भुज दंडा । भोगी रघुपति तुल्य उदंडा
कहुँ शिकार सेना सचि राचहिं । कहुँ संग तियन रास रचिनाचहिं
धरहिं मुकुट कुंडल बनमाला । नूपुर पग नख मुक्त बिशाला
सुरभि गुलाब कोटि गुण अंगन । निन्दत वहजिय कांति अनंगन
जीव स्वरूप सच्चिदा नन्दा । लसत प्रकाश कोटि रबिचन्दा

दो०--देही देह बिभाग गत, स्वतः सिद्ध जिय अङ्ग।
राम सखे गोपुर रमत, अबिनाशी हरि संग॥
जीवहि सो जिय जानिये, अच्युत सो नहिं नाश।
नाम अर्थ में द्वैत मत, समुझि मिटत भव पाश॥
खुल्यो यथारथ द्वैत मत, यह श्रुति को निज मर्म।
और सकल मत कृत्रिम लखि, उपजावत जग भर्म॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन ग्रन्थे ब्रह्म जीव अखंड स्वरूप वर्णनो नाम प्रथमः प्रसङ्गः॥ १॥

॥ अथ रामैकत्व निरूपण प्रकरणम् ॥

ब्यापक ब्रह्म कोऊ जे भजहीं। ईश स्वरूप निदरि अति तजहीं
ब्रह्म राम ते कह एक न्यारा। तिन नहिं ईश्वर तत्त्व बिचारा
अलख अरूप शून्य वे वादी। तिन अति दुष्ट असुर मति लादी
तिन कहँ भयो भ्रम अति भारी। माया बश जड़ता उरधारी
तिन कर जो कोउ संगति करहीं। तेऊ महा भ्रम महँ परहीं
निराकार ब्रह्म कहँ वे कहई। मुख बिनु बेद कहो कस लहई

ब्रह्म वेद विनु कस करि जाना। यातें साअवयव भगवाना
सरयू दृग मन ते जो अनंगा। अस जानव सब अंग प्रसंगा
तब वे मायिक प्रभु इक लेखहिं। वातें श्रुति उत्पत्ति विशेषहिं
सो व्यवहार काल वे मानहिं। दोष आपनो नहिं पहिचानहिं
वेदहिं करयो ब्रह्म निरधारा। उनके मत झूठो ब्यवहारा
ब्रह्म ज्ञान ब्यवहारहि आवहिं। तो मिथ्या उपदेश सुनावहिं
निर अवयव हठ मुख बल कीन्हे। जाते भयो ताहि नहिं चीन्हे
काकभुशुण्डि नाम बल जाके। आश्रम माया जात न ताके
रामनाम शिव नित उच्चारहिं। माया ते काशी जिय धारहिं
अस प्रभु कँह शठ मायक भुवहीं। ब्रह्म अमायक दूसर ठनहीं
समुझे बिना वेद को अर्था। ईश ब्रह्म द्वै कहत अनर्था
वेद अर्थ जब निज करिजानहिं। प्रभु ते ब्रह्म भिन्न नहिं मानहिं

दो०—कबहूँ नहिं रघुनाथ बिच, देही देह बिभाग।
नित्य सच्चिदानन्द तनु, भरयो तियन अनुराग॥
ता प्रभु की लीला त्रिबिध, सुनि जिय प्रकृति लुकाति।
सो मायक नहिं सम्भवै, अँग अंगी द्वै जाति॥
लौकिक लीला जानि यह, अवध बिबिध रसभोग।
कबहूँ देशान्तर गमनि, छावत जनन बियोग॥

लीला असुर बिमोहिनी, दीन्ही गरूड़ भुलाय।
नाग पाश रघुनाथ जू, आये निज रूचि पाय॥
और अलौकिक केलि सुनि, तामें द्विधा प्रकार।
असुरन को अति दुख करन, भक्तन कहँ आधार॥
इक लीला माधुर्य्य मय, गोपुर माया पार।
मुक्त जियन संग नित्यही, अन्तर रहित विहार॥
दूजी अति ऐश्वर्य मय, सागर मथन उदार।
विश्वरूप दरशाइबो, अरू पृथ्वी उद्धार॥
गुण अनन्त थाके बचन, कहि कहि मिल्यो न अन्त।
याते प्रभु कहँ कहत हैं, बचन अगोचर सन्त॥
निर्मायक मन लहत प्रभु, समुझत बुध यह भेद।
कहत अगोचर प्रकृति मन, प्रभु कहँ याते वेद॥
मायिक तनु गुण कर रहित, सो निर्गुण तनु जानि।
निरमायिक तनु गुण युक्त, बहै सगुण तनु मानि॥
निराकार साकार पुनि, निर्गुण सगुण बिचारि।
ये सब नाम जू राम के, ताकहँ जपत पुरारि॥
विश्व रूप रघुनाथ तनु, भक्तन लखेहु बनाय।
राम सखे कौने लखी, ब्रह्म शक्ति बिलगाय॥

एक ईश दूसर जिय नाना। ईश दूसरो सुनेउ न काना
व्यापकत्व यह धर्म कहावा। निराकार याको श्रुति गावा
धर्मी बिना धर्म नहि पइये। खोजि खोजि ग्रन्थन मरि जइये
ज्योतिवानविनुज्योतिनभासहिं। रवि विनु घामन सुनहि प्रकाशहिं
ब्रह्मराम की ज्योति बिशाला। सोइ बिदुष योगिन की शाला
धर्मी धर्म दोऊ एक अङ्गा। जैसे चन्द चान्दनी सङ्गा
प्रभु धर्मी ब्रह्म धर्म अनादी। यह कह सकल वेद कर वादी
चिद मूरति भगवान जो रामा। ताकी प्रभा भई द्वै नामा
परमातम घन ज्योति बिराजहिं। फैल्यो तेज ब्रह्म सो छाजहिं
योगी मडंल ज्ञानी छामहिं। रसिक लखत रवि मुरति रामहिं
योगी प्रणव सु सोहं ज्ञानी। उचरत राम रसिक रस ध्यानी
योगी बिदुष ज्योति भरमाये। राम यथारथ रसिकन पाये
दो०-अस जे भजहिं जू राम कहँ, समुझि तत्व गुरू पाँहिं।
रामसखे तिनके मिले, रहहिं न भ्रम मन माहिं॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य्य बिरचिते श्रीमन्नृत्यराघव मिलन ग्रन्थे ब्रह्म रामैकत्व वर्णनो नाम द्वितीयः प्रसंगः ॥ २ ॥

— —

अथ ज्ञान, वैराग्य, भक्ति निरूपण प्रकरणम्।

सार असार लखिय यह ज्ञाना। तजिय असार विराग प्रधाना
भजिय सार यह भक्ति बखानहुँ। ज्ञान विराग भक्ति अस जानहुँ
प्रकृति असार सार रघुनाथा। जिय जानन वारो यह गाथा
जो धारहिं तीनों यह कर्मा। ज्ञान विराग भक्ति कर धर्मा
ताके संग होय नहिं भर्मा। रहहिं सदा शीतल अति मर्मा
ज्ञान बिराग भक्ति तेहिं तनमँह। मानिय ताहि मुक्त जिय मनमँह
सो समरथ ताको भय नाहीं। कोटिन भोग करहिं जग माहीं
ज्ञान विराग भक्ति कर हीना। ताकँह नर पशु कहत प्रवीना
दो०—ज्ञान दरश वैराग्य रबि, भक्ति नजर जब होय।
राम सखे रघुपति मिलहिं, तब निज जिय सुख जोय॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन ग्रन्थे ज्ञान विराग भक्ति वर्णनो नाम तृतीयः प्रसङ्गः ॥ ३ ॥

अथ श्री नृत्यराघव मिलन ग्रन्थे चतुर्थ प्रकरणम्

रसिक अनन्य वहै सुखदानी। राम रूप बिनु लखहिं न आनी
छबि आशक्त रहहिं मन माहीं। क्षण पल राघव बिसरत नाहीं

हेरि कोऊ सुन्दर नर नारी। राम बियोग करहिं अति भारी
वेष नृपति छैलन असवारी। आवत राम ध्यान छवि कारी
दो०-सुनि कोकिल कर कूक मृदु, नटनि मयूर निहारि।
राम सखे मन करत भष, मिलन राम छबि वारि ।।
अरुण पीत रंग लखि छबिकारी। मोहे करि सुधि अवध बिहारी
कहुँ बिलोकि नग जटित नूपुरन। अवध लालकर रूप चुभत मन
सूँघि सुगंध राग सुनि काना। लागत नयनन राम सुजाना
लखि श्रावण घन तड़ित शरद शशि। रह रघुनन्दन बिरह चिन्त गशि
देखि कुसुम बसन्त ऋतु शोभा। छावत राम प्रेम उर गोभा
रसिक अनन्यन की यह रीती। तेहि उर लगै आनि अति प्रीती
सो सुर पूज्य योनि कोऊ जिय। पाइय जासु जूठ तृप्ति हिय
ताकर जूटनि कर जू प्रतापा। करहिं मुक्त जिय बिनु तप जापा
दो०-रसिकन कर जूठन प्रबल, आप करी रघुनाथ।
शवरी के फल जूठ भषि, त्यागि मुनिन कर साथ ।।

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन ग्रन्थे रसिक अनन्यरीति वर्णनो नाम चतुर्थः प्रसङ्गः ।।४।।

16766

अथ श्रीमन्नृत्यराघव मिलन ग्रन्थे पञ्चम प्रकरणम्

षट लक्षण शरणागत होई। बिनु वैराग्य तरहिं भव सोई
प्रभु अनुकूल क्रिया बश करई। जो प्रतिकूल तिनहिं परि हरई
करिहहिं रक्षा राम कुमारा। राखहिं यह बिश्वास उदारा
रघुपति को आपन आधीना। शरणागत गुण गणहिं प्रबीना
करहिं समर्पण हित करि हरिको। तन मन धन गुरू हाँथन करिको
और दीनता षट धर्म बरणहिं। भयो जानिये तिनको शरणहिं
दो०-और कहहुँ शुभ अशुभ कछु, त्याग ग्रहण हित वृत्य।
सुख सोई सद्गुरु मिलन, दुःख सोई भव कृत्य ॥
रसिकन के मति यह अति दाना। अज्ञ जियन दीजय निज ज्ञाना
रामभक्त रसिकन अपमाना। यहै महा अपराध प्रमाना
कहिये सकल भुवन नृप सोई। राम रूप लखि लीन जु होई
अपर सुरन को तिन उर जापा। रघुपति बिमुख यहै अति तापा
दो०-राम बिमुख भये तेज हत, अवतारहुँ भृगुनन्द।
पुनि जिय बिमुख बिचारि हिय, कैसे लहहिं अनन्द ॥
राम नाम पर जाप यह, उलटौ जपि मुनि राट।
राम सखे गवने अवध, गोपुर खोलि कपाट ॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य्यं विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलनग्रन्थे शरणागतधर्मं तथा शुभाऽशुभवृत्यमय वर्णनों नाम पञ्चमः प्रसङ्गः ॥५॥

॥अथ श्रीमन्नृत्यराघव मिलन ग्रन्थेषष्ठम्प्रकरणम् ॥

राम नाम यह नाम विहारी । रस अनन्त या मँह सुखकारी
रमु धातु ज रस अर्थ सुनावहिं । रूप केलि प्रमादि दिखावहिं
रमु क्रीड़ा अरू रमन जु कहिये । गति मद मोद प्रेम सो लहिये
रमु व्यौहार कान्ति माधुर्य्या । अस्तुति द्युति व्यापक ऐस्वर्य्या
रमु विज गीषा स्वप्न उदारा । रमु विच सब रासादि बिहारा
धनुष रूप माधुर्य्य राम कर । लच्यो काम लखि धनुष कामकर
राम प्रेम मय लीला धारी । सियकँहलखि तनु दशाबिसारी
ऐसेहिं अवध नित्य बहु काला । करत प्रेम तिन माहिं रसाला
बन बन ढूढ़त रूप बियोगी । अति रघुनन्द तियन रसभोगी
कोटिन नृप कन्या को ब्याहीं । रमत अखंड राम सब पाहीं
रामरूप पर रति सब नारी । देखि प्रेम प्रभु करतन न्यारी
नटत तरत गजरथ असवारी । राखत तिनको संग खरारी
तिन्ह संग कृत प्रभु चरितअपारा । रामायण त्रिभुवन विस्तारा
रमुहीं में लखि राज्य सुखदगति । याते लगत केलि सुन्दर अति
राजा बहै दियत दुख भंजन । सो इक रमण राम मन रञ्जन
शबरी की जिन जूठन पाई । भालु कपिन संग करी मिताई
सिय बिनु विरह ठन्यो तजिलाजा। सो वह करैं वाहि सब छाजा

रमु के अर्थ प्रगट प्रभु कीने । केलि रूप आदिक रंग भीने
पुनि सुनि राम द्विवर्ण विवेका । जग मुख्यत्व नाम यह एका
ब्रह्म रकार जीव आकारा । प्रकृति मकार रूप संसारा
राम रेफ गुरू सिया मकारा । युगल नाम यह जपि श्रुतिसारा
राम सुनाम प्रणव को मूला । नाद बेद सब गति अनुकूला
र रा ममा द्वै अत्तर प्यारे । सब वर्णन माथे पर धारे
यथा राम सव ऊपर राजहिं । सब पर राम भक्त तस गाजहिं
दो०-मन्त्र तन्त्र श्रुति संहिता, अरू जे बिविध पुरान ।
राम सखे इन सबन पर, बीज सु राम सुजान ॥
खात सकल जन राम दुहाई । स्वतः सिद्ध नित विनहिं सिखाई
अरे राम हे राम पुकारहिं । तब जिय दुख कछु आनप्रकारहिं
राम शरण गुरू करत बखानहिं । मरेऊ राम शरण पुनि मानहिं
राम नाम पुनि मरत कहावहिं । मृतक संग रामहि पुनि गावहिं
भेंटत राम कहत सब लोगा । र रंकार धुनि रसिकन भोगा
राम नाम काशी निज शंकर । करहिं यही उपदेश मुक्तिकर
राम नाम जग ज्योति राम तन । व्यापकजियनज्योतिसमत्रिभुवन
राम नाम यह रस मय नामा । रसिक अनन्यन को सुखधामा
राम नाम कर जो गति पावहिं । ताकँह और इष्ट नहिं भावहिं
कोउ प्रभु नाम जपहिं मनलाई । मति पर नाम राम पर जाई

दो०-राम नाम कर अर्थ यह, जानत रसिक उदार ।
राम सखे जे रस मगन, डूबे रूप अपार ॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य्य बिरचिते श्रीमन्नृत्यराघव मिलन
ग्रन्थे श्रीरामनामार्थ वर्णनो नाम षष्टः प्रसंगः ॥ ६ ॥

अथ श्रीमन्नृत्यराघव मिलन नाम्नि ग्रन्थे सप्तम प्रकरणम्

राम नाम सम नाम न औरा । जाकँह जपत शम्भु अरु गौरा
राम नाम मँह तीनिहुँ कारण । जग सृजन पालन अरुमारन
दो०-हृस्व अकार मकार बिच, विष्णु सतो गुणवन्त ।
रहत तमोगुण युक्त शिव, वरण मकार हलन्त ॥
राबिच दीरघ आ समुझि, विधि राजस गुणरूप ।
तुरिया निर्गुण रेफ हल, सो वह राम स्वरूप ॥
याते राम परातपर मूल रकार मकार ।
याही महँ निर्गुण सगुण, समुझि नाम निरधार ॥
शालिग्राम राम निज नामा । बहु बपु भणत अन्त पुनि रामा
राम रूप सम रूप न आनी । वकला पहिरि ठगे मुनि ज्ञानी
राम गुणन से गुण कहुं नाहीं । ग्रन्थ कोटि शत इक मुनि पाहीं
रामहिं की पट लीला सोहहिं । एक एक अतिहीं मन मोहहिं

बाल ब्याह अरू रास प्रधाना। बन रन राज बीच अरुनाना
राम सकल अवतार नियन्ता । परशुराम प्रचंड मद हन्ता
राम ईश पुनि राज कुमारा । यह सुख बरणत नहि कछुपारा
रामधाम सम नहिं कोउ धामा । तँह छितिजा सोहति हरिबामा
सरयू प्र म नीर श्रुति गावा । राम मिलन कँह हेतु जनावा
ता सरयू जल परसि शरीरा । दहत त्रिभौतिक श्रम रघुवीरा
दो०-ईश तनन मँह राज तन, वहै ईश तन मूल ।
रामसखे सोई रमत, अद्भुत सरयूकूल ॥
अवधि अवध को अर्थ यह, सबकी अवधि अखंड ।
वन प्रमोद् अति मोद कर, तँह नित रास उदंड ॥
नहिं असत्य सत्या समुझि, बिमला मल कर हीन ।
नाम कोशला कोश कर, सव पुर तिहि आधीन ॥
पुर साकेत अकेत युक्त, याकर यह संकेत ।
राम सखे श्रुति के मते, निरमायिक तँहकेत ॥
कहत अयोध्या अर्थ बुध, करि न सकत कोउ युद्ध ।
काल प्रबल की गति नहीं, तौ को सहै विरूद्ध ॥

अयो देव त्रय ध्यावहीं, तासु अयोध्या नाम।
राम सखे मुनि वर भणत, याते यह पर धाम ॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन
ग्रन्थे नाम रूप गुण प्रताप धाम परत्व वर्णनो नाम
सप्तमः प्रसंग. ॥७॥

अथ श्रीमन्नृत्यराघवमिलन नाम ग्रन्थे अष्टम प्रकरणम्

यह आश्चर्य मुनिन मन रूठे। भषे वेर शबरी कर जूठे
राम सिन्धु जल तारे गिरवर। यह लीला आश्चर्य नारिनर
बन्दर संग यूथ पति पवन। एक राम नर दूसर लक्ष्मण
चढ़े दोऊ कपि सिहन भारी। राम महा आश्चर्य बिहारी
दो०-कछु लीला मर्याद मय, कछु आश्चर्य दिखाय।
राम सखे जे प्रिय रसिक, दोउन पर बलि जाय ॥
रोम रोम ब्रह्माण्डन साजहिं। कौशल्या प्रभु गोद सुराजहिं
ऊँचे तरु फल जाय नवाहीं। तोरें चढ़ि नर कन्धन माहीं
सो भुज काक भुशुण्डि संगधाई। कोटिन योजन क्षणमँह छाई
मानत खात काक भय भारी। कहूँ करहि ऋषि मष रखवारी
टरहिं न लक्ष्य तीरबहु मारहिं। कहुँ मरीच शत योजन डारहिं

सुनितियछबिअतिनकललिखावहिं। कहुँ शिल की तिय हेरिबनावहिं
जो रस ब्रह्मादिक नहिं पावहिं। सो प्रभुअवधत्रियननितप्यावहिं
चंग उड़ावत दूखत पाना। तोरेहु हर धनु सींक समाना
योगिन लगत सुज्योति अभंगा। सो खेलत रघुबंशिन संगा
कैसेउ द्विज अपमान न करहीं। कहुँ द्विज राज मान अतिहरहीं
दो०-भासत जो शिव ध्यान उर, देखहु अगम अपार।
सकल मैथिलिन के हिये, राम सखे जो हार॥
हतत राज हित सुत प्रिय भ्राता। तज्यो सुराज लाज पितु माता
अस्तुतिनिगम न जानहिंखोलहिं। सो हँसिहँसि कान्तनसनबोलहि
करि कटाक्ष ब्रह्माण्डन फोरहि। बायस पर ब्रह्मास्तर छोरहिं
काटन डर सुक चुगौ न मेलहिं। कहूँ कवन्ध भुजन मधि खेलहिं
षट रस ब्यंजन विनु नहिं पावहिं। कहुँ दण्डक वन कन्दहिं भावहिं
नित सोरह श्रृंगार करावहिं। कहुं वकला तन धरि सचुपावहिं
पान अतर विनु छिनन विहाई। चौदह बर्ष सो सुधि बिसराई
कबहुँ न विषय बात मन धारहिं। कहुँ मन सिज मुनिवर वहुवारहिं
अमित त्रियन मधि रास बिहारी। कहुँ लछमण संग मुनिब्रतधारी
निहिंशंकहि मुनि धर्म उचारहिं। मुनि ब्रत लै आपुहि मृगमारहिं
दो०-गज सुख पाल तुरंग बिन, चलत नहीं कहुँ गैल।

कहुँ डोलत मृदु पग नगन, क्षितिवन दण्डक शैल ॥
सुर्पनखा की नाक कटाई । रूप लोभ बिहरण जो आई
करत जु हेत मन्थरा सों अति । जिन्ह दीन्हें वरवस वनकीगति
निज माया बश जियननचावहिं । कहुँ माया मृग पाछेहि धावहि
हैं सर्वज्ञ राम जग साँई । ढूंढ़त सियहिं अज्ञ की नाँई
चूके शर बहु वार निशाना । सप्त ताल वेधेउ इक वाना
करि सुग्रीव मित्र बल हीना । मारयो वालि महा बल पीना
नृप वाहन शुभ चढ़हिं बिचारी । कहुँ करहिं कपि पर असवारी
समुझि योग्य देहिं जन आसन । कहुँ उठिउठि भेंटत बनरन सन
गिरि सम होय नजरि जो आना । लखि गिरि करहिं सिन्धुज्यों पाना
नाव चढ़त सरयू महँ डरहीं । कहूँ सिन्धु पथरन पर तरहीं
दो० दूध फेन सम सेज पर, कर मणि महलन शयन ।
कहुँ पत्तन पर गिरि दरनि, सोवत करि सुख अयन ॥
चतुरंग दल चौगान चलावहिं । रावण सो कपि ऋच्छ लड़ावहि
भृकुटि विलास विश्व उपजावहिं । लषण संजीवन ल्यायजगावहि
जासु कृपा भव फन्द उड़ावहिं । तासु पाश तन गरुड़ छुड़ावहि
कसकत फूल गेंद तन लागे । रावण बाण लेत हँसि आगे
गनि गनि देत हेम द्विज रंकनि । कहुं वकसत हिम लंकअशंकनि

ऊँचे अटन जाय भय खाई। कहुँ विमान नभ बैठि सुहाई
त्रिभुवन राजा राम कहावहिं । कहुँ चिति राज्य सुतिलककढ़ावहिं
सकल विश्व चण महँ संहारहिं। कहुँ रावण हति यज्ञ सम्भारहिं
तारे जिय सिय सहित कलंका । झूलत नभ अब तलक त्रिशंका
यह रघुवर कर अकथ कहानी । सुनि जिय होत भक्ति रससानी
दो०-माधुर्य्य सु ऐश्वर्य युत, लीला कोटिन रंग ।
राम सखे रघुनाथ बिच, समुझि सकल रस अङ्ग ॥

इति श्री मद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघव मिलन ग्रन्थे आश्चर्य लीला वर्णनों नाम अष्टमः प्रसंगः ॥ ८ ॥

अथ श्री मन्नृत्य राघव मिलन नाम ग्रन्थेनवमप्रकरणम्

ऐसो दृढ़ ह्वै यह करि ध्याना । गोपुर मध्य परम अस्थाना
विपिन प्रमोद अवध निज धामा । जहँ नहिं माया कर कहुँनामा
तँह चिन्तामनि भूमि सुहाई । सो रसिकन बांटे लिखि पाई
अद्भुतरत्न पुलिन सरयू तट । झरत तहाँ द्युति सुधा सोमवट
नटत राम तहँ नित्य बिहारी । लीन्हें संग सिया सुकुमारी
कोटिन सखी सखा नृमवेरे । लिये यन्त्र गावहि प्रभु नेरे
रत्ना गिरि तहँ करत उज्यारी । कोटि चन्द्र द्युति तापर वारी
हरित पीत सित श्याम सुरंगा । फूले लतन फूल बहुरंगा

चंपक बकुल कदम्ब अशोका । सोहत लतन माधुरी ओका
तिन मँह सिया मान अति करहीं । राम मनाइ अंक पुनि धरहीं
दो०–हरि चन्दन सन्तान बहु, पारिजात मन्दार ।
राम सखे इन तरुन की, कूंजैं लसति अपार ॥
अन्तरध्यान होहिं क्षण में हरि । ढूढ़ि लेहिं सिय तबहिं प्रेमकरि
अन्तरध्यान रास मँह प्यारो । लहहिं सखी सुभक्ति करिचारो
वहिरंगा अन्तरंगा प्रेमा । परा भक्ति रसिकन सुख क्षेमा
कबहुँ सखी पूजहिं मन लाई । राम बेष कोउ सखी बनाई
क्रीट शीश धनुहीं कर धारहिं । तन मन प्राण निरखि छविवारहिं
चमर छत्र बिजानादिक ढोरहिं । करि प्रणाम हाँथन पुनि जोरहिं
वहिरंगा यह भक्ति दिखाई । अन्तरंगा अब सुनहु वुझाई
कवहूँ सखी ध्यान अति ठानहिं । नयनन मूंदि राम हिय आनहिं
अन्तरंगा यह भक्ति वखानी । प्रेमा और भनत रस सानी
कबहुँ सखी ढूढ़त मिलि पुञ्जन । शरद रैनि सरयू की कुञ्जन
दो०–बूड़ी राम वियोग हृद, ढूढ़ति ब्याकुल अंग ।
राम सखे छवि बावरी, बेधी शरन अनंग ॥
छुटे केश दृग अंजन बहई । उमड़ि उमड़ि आँसुन हियदहई
कित गये राम बूझती डोलहिं । प्रेम पुलकि बचनन मृदुबोलहिं

सुन सरयू तैं परम पियारी। देखे तैं कहुँ अवध बिहारी
हे प्रमोदवन तैं प्रमोदकर। तों मधि वसत मिलायधनुषधर
कहहिं नामतब बिपिन अशोका। राम बताइ दूर करु शोका
कहुँ ढूंढ़हिं कञ्जु की परस्पर। लुकि न रहेउ कहुँ राम रसिकवर
कबहुँ फूल शय्यन सब हेरहिं। कहि कहि राम पिया मुखटेरहिं
कहुँ गहि गहिभूर्भ्कहिंब्यालनसन। राम वियोग नहीं सुधिबुधितन
डसहिं न ब्याल राम तिय जानी। झूमति फिरहिं प्रेम रस सानी
कोउ अति बिकल प्रेम वसनारी। बोली अस मैं राम विहारी
मैं नृप के मणि आंगन चारी। मैं भुशुण्डि संग भुजा पसारी
मैं शर धनुष काम जित धारी। मैं नित ठन्यों जुबेष शिकारी
दो०-मैं मुनि के संग जाइ कर, कठिन ताड़का मारि।
दयों सुबाहु जराइ पुनि, तारी गौतम नारि॥
मैं कठोर शंकर धनु तोरो। मैं सिय सङ्ग कीन्हीं गँठ जोरी
मैं रघुपति प्रमोद बन बासी। मैं नटवर वपु राम बिलासी
प्रेमा भक्ति ललित यह गाई। पराभक्ति सुनिये सुखदाई
कोउ तिय कहहिं मिलत सुनि गाना। सबमिलिगाइय राम सुजाना
तब सब मिलि सरयू तट गावा। करि करि नृत्य रूप दृग छावा
रघुनन्दन तब तत्क्षण आये। युवती सकल प्राण से पाये

लिये ललित धनुहीं कर तीरा। जनु अद्भुत कोउ काम शरीरा
रामधनुष माधुर्य्य अपारा। देखि काम निज धनुष बिसारा
रतन क्रीट घूंघुर युत अलकैं। पान खात लखि लगत न पलकैं
कोउ सजनी आसन करि सारी। बैठारत पिय अवध बिहारी
कोउ तिय कहि अस भौंहन तानहिं। हम तुम्हरी गुमराई जानहिं
कोउ तिय हाँथ पकरि मुख देखहिं। कोउ मुख चूमि सुफलजियलेखहिं
कोउतिय दाबि चरण सुखदाई। मेटत बिछुरन दुख हिय लाई
पराभक्ति कहिये यह प्यारी। राम मिलन यामँह सुखकारी
दो०-रास ध्यान करिये सदा, सकल रसन गम्भीर।
राम सखे प्रण कुटी करि, बसि सरयू के तीर॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य्यं विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन
अवध प्रमोदवन नित्य रास ध्यानवर्णनोंनाम नवमः प्रसङ्गः

अथ श्रीमन्नृत्यराघव मिलन नाम ग्रन्थे दशम प्रकरणम्

पुर साकेत ज्योति मय राजत। कोटि कोटि रबि शशि लखिलाजत
अति समूह जहँ कल्प लतन कर। तँह इक मन्दिर जटित रतनकर
तामधि एक सिंहासन सोहहिं। रचित बिबिधमणि अतिमनमोहहिं
तापर महा पद्म एक राजहिं। दल सहश्र मोतिन मय छाजहिं

तापर लसत सिया रघुनन्दन। असित पुष्प चंपक मद गंजन
सिया करहिं सोरहहुँ श्रृङ्गारा। चोरन चित अवधेश कुमारा
मग सिन्दूर तैल रचि बेनी। चन्दन खौर महा सुखदेनी
पान खात बोलति मृदुबयननि। दमकत दशन हरति प्रभु नयननि
भूषण जे हिम रतन जड़ाये। चन्द्रिकादि अँग अँगमन भाये
मणि माणिक जे पट मँह पोहे। कञ्चन बिनु अंगन अति सोहे
दो०–कसनि कंचुकी घाँघरो, इन्है आदि कछु आनि।
बसन चून्दरी श्याम रङ्ग, राम सखे छबि खानि
फूल माल मोतिन के गजरा। बलया करण लसत दृग कजरा
मुख उर अतर गुलाब लगाये। गुञ्जत भ्रमर सुरभि अति पाये
मेहँदी हाथ पगन माहौरी। देखि देखि भइ रति अति बौरी
यह सिय छबि कछु बरणि न जाई। तापर प्रभु नित रहत लुभाई
सोरहु करहि श्रृङ्गार श्यामघन। मोहन हित अति सिय दामिनिमन
जुल्फन तेल खौरि सिर चन्दन। मुकुट आदि भूषण दृग अँजन
बीरा मुख मणि माणिक हारा। चुपरैं अँग सुगँधि उदारा
फूल गुंथि अंग अँगन पहिरैं। मोतिन माल उठत छबि लहरैं
कछनी कसन इजार सुरँगा। बसन पीत पट ओढ़न अँगा
अरुण हरित रँग धनु कर सोहहिं। स्वर्ण पँख बिचित्र सर मोहहिं

दो०-चित्रित हिम मणि त्रिबिध रङ्ग, राजत कटि तूणीर।
मखमल की पनहीं सुरँग, जटित ललित नग हीर ॥

जनु धनु धरि पुनि काम अनूपा। शिव जीतन हित धरेहु स्वरूपा
या छबि राम जासु उर लागी। सो सब त्यागि भयहु बैरागी
दो०-राज रूप रघुनाथ कर, सब रूपन कर राइ।
रामसखे शिव मगन नित, तासु ध्यान उर लाइ ॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन नाम ग्रन्थे राज माधुर्य वर्णनो नाम दशमः प्रसङ्गः ॥४॥

अथ श्रीमन्नृत्यराघव मिलन नामग्रन्थे एकादश प्रकरणम्

सीता आदि सकल पट रानी। राजहि राम निकट छबि खानी
अमितन सखी सखा चहुँ फेरहिं। छबि आसक्त राम तनु हेरहिं
सेवहिं दासी दास अपारा। सिय पिय सम तिनके आकारा
जाम्बवान अरु भक्त बिभीषन। सेवहिं लच्मण भरत शत्रु हन
हनूमान आदिक कपि ईशा। सेवहिं अमित नाइ पद शीशा
बय किशोर कामहुँ ते सुन्दर। पहिरे मणि भूषण अस वन्दर

वासुदेव मत्स्यादि स्वरूपा । रामहिं वेष्टित लखि निज रूपा
बालमीकि अगस्त्य मुनि आदिक। सेवहिं सब जे जे रस स्वादिक
तहाँ राम सिय नखन प्रकाशा । रबि शशि अमित करत तेहिआशा
नचहिं उर्वशी आदि अप्सरा । गावहिं तुम्बुर अमित किन्नरा
दो०-धनि दशरथ धनि अवध तिय, धनि रघुबंशिन भीर ।
रामसखे तँह लसत यह, कौतूहल रघुबीर ॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन नाम ग्रन्थे श्रीराम आवर्ण ध्यान वर्णनो नाम एकादशः प्रसंग ॥११॥

अथ श्रीमन्नृत्यराघव मिलन नाम ग्रन्थे द्वादश प्रकरणम्

चित्रकूट जँह प्रिया राम थल । करत तहाँ नित रास कुतूहल
कामद चित्रकुट द्वै नामा । ताकर अर्थ सुनहु अभिरामा
कामद जनक लली को रूपा । चित्रकूट रघुनाथ स्वरूपा
मन्दाकिनितँह बहति मोहनो । रत्न भूमि तँह लगति सोहनी
जहाँ शिला द्रवी रघुबर हित । नृत्य चरण तिन्ह पै मृदु अङ्कित
कुञ्ज कुञ्ज जँह राम बिलासा । होत तहाँ लखि दृगन निवासा
चित्रकूट के ढिग गोवर्द्धन । सोहत परम रम्य पश्चिम तन
नारायण शेशादि सहीता । बसत अवध कामद गिरि कहता

निवसत अवध कृष्ण रङ्ग भीने। पश्चिम दिशि वृन्दावन लीने
अवध माहिं पूरब दिशि मिथिला। तँह प्रभु करत ब्याह सुखअतुला
दो०-सब लोकन ऊपर अवध, ऐसेहिं लसत अखंड।
राज केलि रासादि कर, तन मधि रहत घमंड॥

इति श्री मद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघव मिलन नाम ग्रन्थे अवध आवर्ण वर्णनों नाम द्वादशोप्रसंगः॥ १२॥

अथ श्रीमन्नृत्यराघव मिलन नाम ग्रन्थे त्रयोदशप्रकरणम्

भनेहुँ महा बैकुंठ सबन पर। तापर गोपुर मध्य अवध बर
अवधि अवध की अवधि जो वरणी। लबधि प्रेम करि ताकर धरणी
तँह सरयू मणि घाटन छाई। कहि न जात अद्भुत रुचिराई
फूले जल थल कमल अनन्ता। बन प्रमोद नित रहत बसन्ता
गुञ्जत भ्रमर कोकिला बोलत। नटत मयूर काम जनु खोलत
अवध नहीं रबि शशि पावक गति। स्वयं प्रकाश राम सियको अति
अवध पाय जिव जग नहिं जावहिं। गई रैनि जस पुनि नहिं आवहिं
अवध जीव विवित्त सब पीरा। सत चित आनन्द रूप शरीरा
काम रूप सब अवध निवासी। रघुपति सम छवि भोग बिलासी
तँह रघुबीर बेष नृप सोहहिं। कोटिन कामन की छबि मोहहिं

द्वै भुज राम अखण्डित रूपा। तैसहिं द्वै भुज सिया स्वरूपा
बय किशोर दोउ रहत सदाहीं। करत सुराज्य अवध जग माहीं
दो०-चमर छत्र विजनादि युत, सिंहासन आसीन।
त्रिदश बर्ष की त्रियन मधि, बिबिध केलि रस लीन॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन नामग्रन्थे जीव ईश्वर स्वरूप वर्णनो नाम त्रयोदशः प्रसङ्गः॥१३॥

अथ श्रीमन्नृत्यराघवमिलन नाम ग्रन्थे चतुर्दश प्रकरणम्

बन अशोक जँह कुञ्ज अनेका। तिन मधि बैठक मण्डप एका
तँह शोभत सियराम कमल पर। सेवहिं दलन नर्म नागरि बर
कमला चन्द्रकलादिक नारी। छबि विह्वल सिय राम पियारी
पुनि सिय राम रमत बहु कुञ्जन। गुंजत भ्रमर सुरभि पद कञ्जन
चकित चकोर चन्द्र नख घोरहिं। चातृक भवँत तड़ित घनं मोरहि
गज अरू हंस चाल गति लोभा। बिकल काम रति लखि नव शोभा
रास वेष बिलासिनि करहीं। बेष कुञ्ज प्रभु मन अति हरहीं
साँगानन्द करहिं बहु सेवा। कुञ्ज मालती लखि प्रिय देवा
बृन्दा काम केलि रस पागे। केलि कुञ्ज प्रभु चित अति लागे

नित्या सखी देहिं सुख नाना। सुखद कुञ्ज भेंटति प्रिय प्राना
दो०-मोदति प्रेम प्रदर्शनी, रामहिं मुदित हिण्डोर।
श्रावण कुञ्ज हिण्डोल नित, तहाँ मधुर घनघोर॥
सखी बसन्त तरंगिनि मिलि हिय। डोल कुञ्ज बसन्त पागहिं पिय
अनुमोदिनी पबावहिं भोजन। भोजन कुञ्ज लसति बहु भोगन
मदन मंजरी सेज बिछावहिं। शयन कुञ्ज सियराम सुवावहिं
बीणावती बीण मृदु धारहिं। सुगंधिका सुबयन उच्चारहिं
सुखदा सखी सप्त स्वर गावहिं। करि करि नृत्य सुराम रिझावहिं
खंजन दृगी खंजरी भावहिं। गान कला सुमृदंग बजावहिं
सारङ्गी सुसारङ्ग लोचनी। पूरति ध्वनि सियराम रोचनी
कमला बिमला आदि सखीजन। शुक मुन्द्रादिक नर्म सखागन
ये सब रहहिं सदा प्रभु संगा। बन प्रमोद जँह रास अभंगा
यह रस जीवन को अति दुल्लभ। जब गुरु कृपा होय अतिसुल्लभ
दो०-रासादिक बहु चरित प्रभु, करत महा सुख केतु।
रामसखे अति प्रेम सो, अवध जनन के हेतु॥
कहुँ गजरथ कहुँ हय रथ चढ़हीं। कहुँ सुखपाल बैठि मग कढ़हीं
कहुँ मेढ़न कहुँ गजन लड़ावहिं। कबहुँ कबुतर गगन उड़ावहिं
कहुँ भौंरा गोलिन चक डोरी। कहुँ खेलत कुस्ती सम जोरी

कहुँ तरु चढ़ि बोलहिं जिमि मोरा। कहुँ करहीं सुक पीकसमसोरा
कहुँ बहु पच्छिन ललित पढ़ावहिं। कहुँ मृग बच्चन पालि लड़ावहिं
कहुँ सतरञ्ज नरद कहुँ चौपरि। कहुँ खेलत सरयू जल महँ तरि
कहुँ शर लच्छि रोपि तकि मारहिं। कहूँ कुदाय अश्व पुचकारहिं
कहुँ खेलत प्रभु आँख मिचौनी। कहुँ कर खेल अवध अनहोनी
कहुँ सरयू जल शिला तरावहिं। राम नाम लिखि सेतु बंधावहिं
कहुँ कपि ऋच्छन कटक चलावहिं। करि लङ्का की नकल बतावहिं
दो०-कहुँ मिथिला कहुँ कामता, कहुँ रत्नागिरि आनि।
रामसखे लीला करत, कोटिन सुख कर खानि॥
कहुँ चौगान चंग कहुँ गेंदन। कहुँ खेलत खेटक प्रमोदबन
चढ़े अश्व प्रभु संग बहु कूकर। देत बताय हाथ ते शूकर
करि छल राम श्वान इत ऐंचहिं। उतहिं सुराम पारषद खैंचहिं
राम शिकार जीव जे मारहिं। ते सब राम धाम पगुधारहिं
पुनि चढ़ि तख्त विहंग शिकारा। खेलत प्रभु कौतुकी उदारा
छोड़ी कुही राम हँसि कर सों। ताक्यो हंस भगे बिधि डर सों
जुर्रा लखन मोर लखि भागा। तजि सेनापति अति भय पागा
भरत बाज लखि शशा डरानो। शशहिं छोड़कर विकल परानो
देखि शत्रुहन बहिरी मुर्गा। गिरयो डराय लियो छितिदुर्गा

कहुँ शिकार प्रभु अस रंग करहीं । रघुबंशिन सुमोद मन भरहीं
दो०-पुनि बन पुष्प गुँथाय प्रभु, अँग अँग पहिरि अनूप।
रामसखे सन्ध्या समय, चले अवध सजि रूप ॥
हरित मणिन मय मुकुट शिकारी । मृग मद तिलक महा छबिकारी
कुण्डल मकर रतन मय झलकैं। मुकुर कपोल छिटकि रहिं अलकैं
मुख पर श्रम जल बिन्दु बिराजहिं । मानहुँ कंज ओस कण छाजहिं
झिलमिल हरति काछनी झीनी । बनमाला पहिरे रंगभीनी
हरित तुणीर खैंचि कटि बाँधे । धनुही हरित लसति अति काँधे
कर पर कुही अश्व असवारा । यह छबि सोहत अगम अपारा
आस पास सेना रघुबंशिन । लिये कर बान कमल कोउ पद्मिन
जीव अनेक शिकारी संगा । चीते श्वान आदि बहु रंगा
धौंसा बजत अश्व गज ऊँटन । बोलत ऊँच नकीब बरूथन
कोटिन संग जाँगरा गावत । सुनि सुनि प्रभु बकशीश करावत
दो०-त्रिया झरोखन झाँकहीं, आवत यों रघुनाथ ।
रामसखे लखि बदन शशि, लोचन करत सनाथ ॥
ठौर ठौर आरती उतारहिं । ऐसे प्रभु महलन पगु धारहिं
कौशल्यादि मातु सब भेंटहिं । राई लोन वारि दुःख मेटहिं
पुनि सिय मन्दिर राम पधारहिं । कोटिन रतन सखिन तब वारहिं

पुनि प्रभु कँह बैठारि निहारहिं। दिन कर बिछुरनि तपनि निवारहिं
पुनि बृह करि प्रभु बिनय सुनावहिं। आँसू दृगन मेघ ज्यों धावहिं
ये तुम्हरे भुज दण्ड राम पिय। बिछुरत नहिं हम कँह निशि दिन हिय
छत्र छाँह बैठन सिंहासन। पान खान छुटकन अलकन घन
बिनु देखे यह राज लुनाई। पल पल कल्प समान बिहाई
जब लगि तुम बिहरहु खेटक बन। तब लगि हम अति रहहिं बिकल मन
छण छण लखहिं झरोखन जाई। सन्ध्या की आवनि सुखदाई
दो०-नयननि ते नहिं होहु तुम, न्यारो छण पल लाल।
रामसखे यह बीनती, करहिं सकल मृदुबाल॥
राम कुञ्ज पुनि सिय मिलि जाई। बैठि सखिन मधि अतिहि सुहाई
करहिं सखी पुनि राम बेष तन। बैठारहिं सियराम सिंहासन
पञ्च खंड शिर क्रीट रतन को। नगमुक्ता कोउ सुकृत यतन को
जगमगात मणि कुण्डल कानन। लसत लाल मुख शोभित पानन
अलकैं कुटिल कपोलन लरकहिं। सो निशि दिन रसिकन हिय करकहिं
चन्दन तिलक रेख युग कीन्हें। केशर बिन्दु लेत मन छीने
हिम मय पीत काछनी काछे। कसे पीतपट कटि अति आछे
कण्ठ लाल मणि पदिक मनहुँरबि। मोतिन गजरन जनु पंगति कबि
पहिरे बैजन्ती बनमाला। बाजूबँद कँकण छद जाला

नूपुर किंकिणि अतिहि मनोहर। देखि देखि हिय होत प्रेम घर
दो०-फेरत लीन्हे कमल कर, चितवनि चञ्चल नैन।
रामसखे नटवर बने, मानहुँ तनुधरि मैन ॥
पुनि धरि भोग आरती करहीं। लखि छबि सखिन प्रेम मन भरहीं
कोउ कर नृत्य कोऊ कर गाना। कोऊ बजावहिं यन्त्र निशाना
पुनि पायँन परि प्रभुहिं उठावहिं। धरि गल भुज त्रिय संग नचावहिं
थेइ थेइ करहिं मुखन मृदुबानी। युवतिन सकल राम रस सानी
गावहिं उच्च स्वरन अतिहीं कल। होत नसै गल रक पाय बल
नटहिं राम अरु सिया परस्पर। मोर हंस गति लेत गतिन बर
सोहत राम सखिन मधि प्यारो। मनहुँ तड़ित अङ्ग बिच घन कारो
बीण मृदङ्ग मुरलिका आदिक। बाजे सखी बजावहिं स्वादिक
नूपुर किंकिणि बलयन की धुनि। भये बिकल सुनि सकल सिद्धिमुनि
पगे रास लखि ब्यालहु नाना। बसत भेक पण करत न पाना
दो०-रास श्रमित सिय राम पुनि, गये शयन हित कुञ्ज।
रामसखे भीने दोऊ, महा रूप रसपुञ्ज ॥
जगे राम पुनि भोर सुहायो। प्रथम भोग मधुपर्क लगायो
पुनि सखियन अस्नान करावा। गोंदन लै शृङ्गार बनावा
कोउ कर धूप दीप कोउ रचहीं। कोउ हिम थार भोग मृदु सचहीं

कोउ सरयू जल कर अँचवावन । कोऊ ताम्बूल देहि शशि आनन
कोउ आरती करहि अति प्रेमा । लखि प्रभु रूप मनावहिं क्षेमा
पुनि मातन मिलि प्रभु कछु खाँहीं । आज्ञा लै प्रमोदबन जाँहीं
वहँ पुनि खेटक मिस बहुरंगा । करहिं बिबिध रघुबंशिन संगा
राम जगाती ह्वै कहुँ सोहहिं । रोकि गैल बातन मन मोहहिं
पाली ग्राम ग्वालनीं रहहीं । तिन सन प्रभु नित दधि कर लहहीं
कहुँ राघव मण्डलो करावहिं । सबमिलि दधि लावहिं प्रभु पावहिं
दो० ऐसे बन नित जाय प्रभु, पुनि निज महलन जात ।
रामसखे रस केलि मय, निशि दिन अतिहिं सुहात ॥
कौशल्यादि सैकड़न माता । कहुँ सबके दधि पावत प्राता
कहूँ सखन मिलि एक पनवारे । खात खीर राकेश उज्यारे
कहुँ बीणादिक स्वरन बजावहिं । गाय तान बन मृगन बुलावहिं
कहुँ सब बिद्या पढ़हिं पढ़ावहिं । कहुँ बशिष्ट गुरु धेनु चरावहिं
नन्दी ग्राम राम कहुँ बसहीं । कहूँ धाय धौवाधर लसहीं
कहुँ मिथिला दण्डक लीलनगन । करहिं अवध सब नकल श्यामघन
कहुँ षट ऋतु बिहरत हरि सीता । सित पीतादिक कुञ्ज पुनीता
कहुँ सियराम ब्याह सुधि करहीं । नृत्यसमय पुनि भाँवरि भरहीं
कहुँ दच्छिण नायक रस लीला । करहिं राम सुन्दर मृदुशीला

सीता करि अस्नान बिराजी। कहि न जात शोभा अति छाजी
भगिनी इक वीरंग भूपकी। पटरानी वह अवधि रूपकी
ताते जुवाँ जीति वहराती। लखि सिय को धन अति सुखमाती
और कमलया इक पटरानी। करी कृपा करि निज बरदानी
पद्मावंक लखनि रंग बरषहिं। पिय के मिलन हेतु जिय करषहिं
अंग मरोरति लेति जँभाई। कमला काम बिबश अकुलाई
भुज उठाय दोउ रानी तारा। दरशावति उर करति बिहारा
करन कण्डु अंगुलिहिं चलावहिं। प्रिया सुकेशी सयन बुझावहिं
पिय सन्मुख ह्वै बाँधति निब्या। मिलन हेतु नव बधू सुइब्या
एक राति आठहु पटरानी। मिलन चहति प्रभुसों रति सानी
अटके प्रभु घटिका द्वै चारी। नारि सबै सम प्रेम निहारी
जाइय अस समुझी यह बाता। लखहिं न कोउ काहू पँह जाता
मिलेहु न कोउ त्रिय प्रगट खरारी। हैं दक्षिण नायक सुखकारी
गुप्त गुप्त सब पँह ह्वै आयहु। तप्त तियन कर अंग जुड़ायहु
ऐसहिं पूजत सब कर आशा। अमित त्रियन संग करत बिलासा
रामा अमित रमत। नित याते। राम रमण यह अर्थ जुताते
करत भोग रघुबंश उज्यारे। कोटिन सुरपति तिनपर बारे
कहुँ चोरिन कोऊ तिय भवने। मन्द मन्द रघुनन्दन गवने

नूपुर ध्वनि सुनि तिय इक जागी। गये बैठि प्रभु भय अति लागी
लगे पगन ते नूपुर छोरन। खटकति उर यह छबि चित चोरन
तब वह तिय हँसि बचन उचारे। करो न इन्हें पगन ते न्यारे
चरण शरण तुम्हरी ये आये। शरणागत तुम बेदन गाये
सोवति सब तुम्हरी पटरानी। जाहु चले सुखसे धनुपानी
मिलहु जाइ जो तिय मन मानी। भाग्यवती सु वहै पटरानी
डरहु न मोसन रसिक दुलारे। मैं पागी अति रूप तुम्हारे
कँहउ न यह काहू सन गाथा। तो अंकोर पावहुँ कछु नाथा
कहहु सुदेहुँ अँकोर नागरी। सत्य कहौं सुन रूप आगरी
देहु मिलन रस कन्त पियारे। कुसुम सेज चलि महल हमारे
पुनि वापँह तुम जाहु तुरन्ता। निःसन्देह चित्त करि कन्ता
यह तिय को दय मिलन अंकोरा। गवने पुनि वहि कामिनि ओरा
करेहु प्रवेश महल मँह वाके। लाइ अङ्क जुड़ये अङ्ग ताके
दो०—कोउ तिय पोषित भर्तृका, लग्यो बिरह अति आग।
तजतिन रार्महि सेजते, सुनेहु जनकपुर जात॥
कोउ तिय सो मिलि चिन्तयुत, आये हरि सुख ऐन।
देखि खण्डिता तिय कहत, कपट लिये मृदुबैन॥
आगे अप्रिय बचन कहि, कलहन तरिता नारि।

पुनि लागे करि बिनय अति, करे प्रसन्न खरारि ॥
वँध्यो बिप्र लब्धा तियहिं, मिलन कुञ्ज अहलाद ।
गई तहाँ नहिं लखे प्रभु, करन लगी दुर्बाद ॥
गई कुञ्ज सुनि दरश रति, लखी न तँह रघुलाल ।
नई बधू उत्कंठिता, भई बिरह बेहाल ॥
कुसुम सेज मणि महल रचि, गावति चरित रसाल ।
जोवति मग रघुनाथ की, वाशक शय्या बाल ॥
लगत राम प्रिय प्राण ते, तजि न सकत उर लाय ।
तिय स्वाधीन जु भर्तृका, धावत हरि तेहि पाय ॥
कुञ्ज कुञ्ज प्रति राम कँह, ढूँढ़ति सरयू तीर ।
नारी वह अभिसारिका, धरति न नेकहु धीर ॥

नित्य रास मंडल रघुनाथा । सकल तियन कँह करत सनाथा
तोषत सबन जासु जस भावा । कृपावन्त रघुनाथ स्वभावा
कहुँ नर्म सखन राम शृङ्गारहिं । पुनि निज नयनन रूप निहारहिं
कहुँ अपनो शृङ्गार करावहिं । राम कान्ति नर्म सखन दिखावहिं
नितहिं जुआदि खेल बहु खेलहिं । नितहिं राम रघुबंशिन मेलहिं
यह बर ध्यान जाहिं उर लागहिं । सो सब मत छोई लव त्यागहिं

दो०-नृत्य राघवी सखा नर्म, तिनको यह अति ध्यान।
रामसखे हमरो यहै, मत सब रसिकन प्राण॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन नामग्रन्थे विविध केलि वर्णनो नाम चतुर्दशः प्रसङ्गः ॥१४॥

अथ श्रीमन्नृत्यराघवमिलन नाम ग्रन्थे पञ्चदश प्रकरणम्

यह निज मत बशिष्ट गुरु दीन्हा। रघुकुल जानि नात अति चीन्हा
राम मन्त्र निज करण सुनावा। परम्परा पुनि तत्व लखावा
सम्प्रदाय बिधि मूल प्रधाना। अधिकारी तामँह हनुमाना
मध्व रूप सोई अवतरिया। मत अभेद जिन खण्डन करिया
दो०-पाय बशिष्ट सुनाम गुरु, तिनके परिकर मध्य।
रामसखे आनंद भयो, लह्यो स्वरूप अवध्य॥
षोड़श बर्ष किशोर मृदु, तुरिया जिय घनश्याम।
पीताम्बर कटिपर धरे, तड़ित बरन अभिराम॥
लखि निज रूप जीव मद छाक्यो। पुनि साकेत केलि रस ताक्यो
जे रघुकुल नर्म सखा कहावहिं। नर्म चरित तिनके मन भावहिं
रासादिक मृगयादिक रङ्गा। रहहिं सदा दोउन के संगा

राम तुल्य ऐश्वर्य राज सुख। यद्यपि जियत बिलोकि राममुख
कहुँ सजिकै गजपर चढ़ि हर्षहिं। प्रभुकी गोद बैठि रस बर्षहिं
कहूँ मानिनी तियन मनावहिं। करि बसीठि प्रभु कँह जु मिलावहिं
कहुँ रति दान तियन प्रभु देहीं। तँह बिजनादिक टहल जू लेहीं
कहुँ आपुहिं रति पति रस तोषहिं। धरि तिय तनु अति प्रभु कँह पोषहिं
कहुँ निज तियन आपु रस बोरत। रास ठानि प्रभु ज्यों चित चोरत
कहुँ रघुपति संग करि गलबाँहीं। नृत्यत रंग महल के माँहीं
सिय ज्यों करति केलि प्रभुके संग। चुम्बन मिलन आदि जेते रंग
प्रभु अरु आपु परस्पर रूपा। पियें नित्य डूबे रस कूपा
यह सुख को जो प्रापति होई। अस जग जन कोटिन मँह कोई
वैष्णव धर्म जन्म बहु करई। तब यह मारग कँह अनुसरई
दो०-नर्म सखन के भोग कँह, बेद न पावत अन्त।
जो पावत सो होत है, सखा जु नर्म तुरन्त॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य्यं विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन
ग्रन्थे नर्म सखन रहस्य बर्णनोनाम पञ्चदशः प्रसङ्गः॥१५॥

अथ श्रीमन्नृत्यराघव मिलन नाम ग्रन्थे षोड़शप्रकरणम्

यह सुख एक जन्म जो लहिये। तौ जग ढूँढ़ि रसिक संग रहिये
उनके संग रहि यह निज करिये। आज्ञा बिनु कहुँ पग नहिं धरिये

आज्ञा में पाइय सब लच्छण । समुझत यह अति अर्थ बिचच्छण
तब वे रसिक कृपा अति करहीं । वह सुख जिज्ञासू उर धरहीं
दो०-रसिक गुरुन कँह अपनपौ, सर्व समर्पि सुदेय ।
अस जिज्ञासू शिष्य तब, बिनु श्रम हरिपद लेय ॥
इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन नाम ग्रन्थे रसिक गुरू जिज्ञासू शिष्य मिलन पद्धति वर्णनो नाम षोड़शः प्रसङ्गः ॥१६॥

अथ श्रीमन्नृत्यराघव मिलन नामग्रन्थे सप्तदश प्रकरणम्

दो०-सो रसिकन की वृत्ति अब, भनौं परमहित पाय ।
धारि शिष्य उर भव निदरि, वह सुख देत मिलाय ॥
चित सन्तोष महा धन लीने । रघुबर की लीलन अति भीने
रसिक अनन्यन सों मिलि लोभहिं । उनके पगन धोय मन छोभहिं
जानि नात निज बारहिं बारा । राम समान करहिं उपचारा
सखा सखी द्वै भाव जु राखहिं । मधुर चरित्र राम के भाषहिं
विधि निषेध सब कर्म जु त्यागे । रहत सदा रघुपति छबि पागे
पुजहिं नहीं पितर बहु देवा । रामहिं की भावहिं निज सेवा
राखहिं एक राम विश्वासा । करहिं न त्रिभुवन दूसर आसा

राम कुटुम्ब कुटुम्ब निज जानहिं । सपनेहुँ जग नातो नहिं मानहिं
सीतापति कृत जग सब देखहिं । याते सब जिय सम करि लेखहिं
तृजग योनि आदिक जीवन गन । देहिं न दुख काहू बच क्रम मन
दो०-तिन मँह रसिक अनन्य कोउ, राम भक्त निज संत ।
रामसखे तिनकी सदा, करत संग बुधिवन्त ॥
आये हर्ष गये नहिं शोका । तृण समान देखहिं ब्रह्मलोका
नृप अरु रंक होय किन कोऊ । रसिक विना वे त्यागहिं दोऊ
रसिकन के नित भोजन पावहिं । रसिकन बिनु भिक्षा मनलावहिं
राखहिं इक हिम अर्थ गुदरी । जनु बिराग की त्रिया सुन्दरी
तुलसी की धारहिं गल माला । भक्ति स्वरूपानन्य मराला
देहिं तिलक निरमायल चन्दन । हरदी बिन्दु पीत जगबन्दन
भृकुटी अन्त शीश पर्यन्ता । करहिं मिहीं रेखन छबि वन्ता
बोरि हरिद्रा में धनुशायक । धरहिं सुजान छाप रघुनायक
एक सूत बस्त्र रंग पीरा । धारहिं तनु मानों रघुबीरा
राम मंत्र षटअक्षर काना । करहिं येही उपदेश प्रधाना
दो०-दयावान वाणी मधुर, त्यागी सहित बिबेक ।
लीन्हे निज चैतन्य चित, रामरास व्रतएक ॥
कटि कौपीन कमण्डलु धारी । बन प्रमोद कल कुञ्जन चारी

भणहिं नृत्य राघव जय बानी। राम रसिकता हिय उफनानी
राम रास ग्रन्थन मन लाई। सुनहिं सुनावहिं प्रेम बढ़ाई
मन क्रम बचन रास को ध्याना। करहिं सु निशिदिन परम सुजाना
बचन रास के पद उच्चारहिं। मन मँह रास धारना धारहिं
तनु मँह रास शृङ्गार बनावहिं। लखि सिय राम रूप बलि जावहिं
दो०-सुत दारा धन राज्य सुख, मगन जगत जिय मन्द।
राम रास लखि रसिक जन, लहत परम आनन्द ॥

इति श्रीमद्राम सखेन्द्र निध्याचार्य्य विरचिते श्रीमन्नृत्यराघवमिलन नाम ग्रन्थे रसिक लक्षण वर्णनो नाम सप्तदशः प्रसंग ॥१७॥

अथ श्रीमन्नृत्यराघव मिलन नामग्रन्थे अष्टादशप्रकरणम्

राम रास रस जे मतवारे। तिनको लगत सकल मत खारे
पियहिं राम रस भोगहु करहीं। तउ जग कर्म पास नहिं परहीं
योग भोग दोउ सम करि लेखहिं। राम रूप बिनु एक न पेखहिं
पवन रहै सबमें अरु न्यारी। तैसेहिं रसिकन गति जग भारी
रसिकन की कोउ नकलहुँ पावहिं। तौ वह कबहुँ असल ह्वै जावहिं
मिलहिं नृत्यराघव तिहिलगि गल। तजहिं न बाँहि रास मँह छिणपल
दो०-हनुमत शिव व्यासादि मुनि, तिनकर मति लखि चारु।
भनेहुँ नृत्य राघव मिलन, रामसखे रस सारु ॥

सुनहिं नृत्यराघव मिलन, समुझि करहिं पुनि नेह ।
बसहिं सु जे गोपुर अवध, बन प्रमोद रस गेह ॥
ग्रन्थ नृत्यराघव मिलन, बिना सुने जिय अन्ध ।
जिय ईश्वर निज रूप कर, जानहिं कहाँ निबन्ध ॥
पठन नृत्यराघव मिलन, करहिं कोऊ नर नारि ।
आवत तँह सब तियन युत, राम नटन तनुधारि ॥
सम्बत अष्टादश चतुर, शुक्ल मधुर मधु तीज ।
भयो नृत्यराघव मिलन, उद्भव सब रस बीज ॥
गिनती नृत्यराघव मिलन, दोहा इक शत तीस ।
अरू बीस पुनि चौपाई, दोसौ दश छयालीस ॥

इति श्री मद्राम सखेन्द्र निध्याचार्यं विरचिते श्रीमन्नृत्यराघव मिलन नाम ग्रन्थे रसिक ऐश्वर्य वर्णनो नाम अष्टादश: प्रसंगः ॥१८॥

॥ श्रीसीतारामार्पण मस्तु ॥

समाप्तोऽयं ग्रन्थः

प्रकाशक

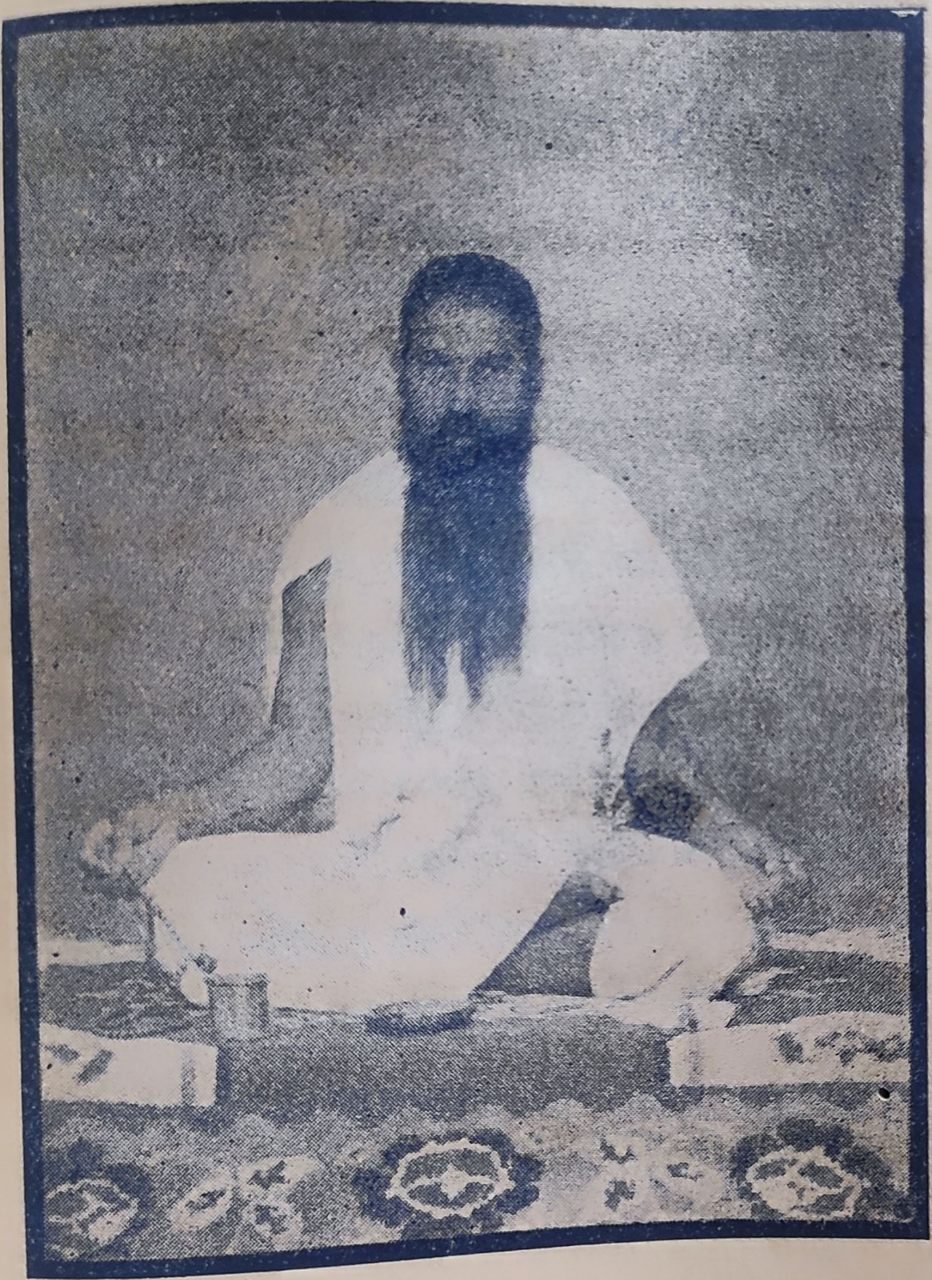

विविध यज्ञ संयोजक महान्त षट श्री-

श्रीसियाशरणजी महाराज

प्रकाशक का परिचय

इस ग्रन्थ के प्रकाशक श्री श्री १०८ स्वामी श्री सियाशरणजी महाराज विशिष्ट सन्तों में से हैं। आप श्रीमद्रामसखे कुलभूषण तथा सख्य रस के महान भावुक सन्त हैं। आप किशनगढ़ (राजस्थान) के सुप्रसिद्ध स्थान श्रीपीताम्बरजी की गाल के महान्त और श्रीअवध के अन्तर्गत श्रीनृत्यराघवकुञ्ज के उत्तराधिकारी भी हैं। आप उदार चित, भजनानन्दी और विशेषतः नामानुरागी सन्त हैं। आपके द्वारा अनेक यज्ञ बड़े ही समारोह के साथ विशिष्ट विद्वानों के द्वारा सम्पन्न हुये तथा किशनगढ़ राजस्थान में आपकी पर्य्याप्त प्रसिद्धी भी है। आप धार्मिक कृत्यों को बड़ी उत्साह के साथ भाव-पूर्वक करते कराते रहते हैं। आप अभी नवयुवक सन्त हैं भगवान श्रीराघवेन्द्र सरकार से मंगल कामना है कि आपके शुभ संकल्पों में सदा सहयोग प्रदान करते रहें।

विनीत—

प्रोप्राइटर--सरजूप्रसाद श्रीवास्तवा

श्रीहनुमत् प्रेस, श्रीअयोध्याजी।

❀ श्रीमन्नृत्यराघवाय नमः ❀

❀ श्रीमद्रामसखेन्द्र निध्याचार्यजी कृत संक्षिप्त ❀

॥ दोहावली ॥

दोहा-नैन अलौकिक कमल लखि, राम अलौकिक भानु।
रामसखे फूले कमल, रबि लौकिक इम जानु ॥ १ ॥
लगत राम प्रिय रबि चखन, कुल नातौ अतिमान।
रामसखे मन चन्द संग, लगे लगो दृग जान ॥ २ ॥
सुरभी युवती हृद कमल, बिरह चन्द्र दिन लेख।
रामसखे फूले कमल, साँझ अवधि रबि पेखि ॥ ३ ॥
टेढ़ी जुलफन अवधनृप, बाँधे पेचन माह।
रामसखे यह छबि निरखि, बढ़ै सखिन रस चाह ॥ ४ ॥
अञ्जन निशि दीजै दृगन, भये मुनिन चित चोर।
रामसखे अब अवध तिय, बचै न वृद्ध किशोर ॥ ५ ॥
मुकुर कपोलन रामके, पीक दिखाई देत।
रामसखे सुखको समय, ऐंचि चित्त को लेत ॥ ६ ॥
रामसखे लखि राम दृग, समर समर सर पीन।
बन बनमें चारो दुरे, कञ्ज खञ्ज मृग मीन ॥ ७ ॥

जात बिकृत की बिकृतता, गनै को फल श्रुति चार।
रामसखे तब लाल की, लगे दृगौं की मार ॥ ८ ॥
नकसुक्का रघुराज के, राजत अतिहिं बिशाल।
रामसखे जनु कमल पर, उदय भयो कवि हाल ॥ ९ ॥
दृगन बचाय गुलाल को, डारो वांकी ओर।
रामसखे यह नव बधू, तुम नव अवध किशोर ॥ १० ॥
प्रीति रीति अति कठिन है, कहिबे की कछु नाँहिं।
रामसखे जा तन लगी, सो जाने जिय माँहिं ॥ ११ ॥
हम तुमको तन मन दियो, तुम न लखी यह प्रीती।
रामसखे का कीजिये, देखो यह अनरीति ॥ १२ ॥
तन जो हमारो फिरत है, मन हमरो तुम पास।
रामसखे बिनु तन मिले, यद्यपि मन जू दास ॥ १३ ॥
तुम हमसे रूठे रहत, हम तुम्हरे आधीन।
रामसखे नहिं चाहिये, ऐसी तुम्है प्रबीन ॥ १४ ॥
अवध नगर ते आइके, चित्रकूट की खोर।
रामसखे मन हरि लियो, सुन्दर युगुल किशोर ॥ १५ ॥
बड़े बड़े नयना मारने, घुँघुर वारे वार।
रामसखे मन बस गयो, सुन्दर राजकुमार ॥ १६ ॥

रतन क्रीट कटि पीत पट, कर धनुही अरु तीर ।
रामसखे मन बसत नित, बनमाली रघुबीर ॥ १७ ॥
काम शृङ्गार बिहार को, मूल अवधपति रूप ।
श्याम राम पुनि धनुषधर, रामसखे पुनि भूप ॥ १८ ॥
सुर्पनखा अरु मुनिन को, मोह्यो चित्त कठोर ।
रामसखे ता रूप की, नकल काम चित चोर ॥ १९ ॥
रूप अवधि दशरथ सुवन, दण्डक बन पगुधारि ।
रामसखे तृण वकल धरि, करे सकल मुनि नारि ॥ २० ॥
अस्ननि घस्ननि पद नटनि, सोहैं सिय रघुबीर ।
रामसखे अँकित शिलन, मँदाकिन के तीर ॥ २१ ॥
जपत कञ्ज अग भृङ्ग ले, तुल्य होन जल माँझ ।
रामसखे सिय मुख निरखि, पुनि सकुचत नित साँझ ॥२२॥
बार बार हिम तनु धरत, वरि वरि अगिन मँझार ।
रामसखे सिय अँगद्युति, लहत न तऊ अपार ॥ २३ ॥
दाड़िम की छाती फटी, दामिन दुरत लजाय ।
रामसखे सिय दँत लखि, मुक्ति परे जल धाय ॥ २४ ॥
रामसखे सिय बदन की, उपमा देवे काज ।
गढ़त मिटावत आजुलगि, शिल्प ताज उड़राज ॥ २५ ॥

रामसखे सिय बदन सों, तौल्यौ बिधि तब सोम ।
तारा सब अहड़ा धरे, तऊ गयो शशि ब्योम ॥ २६ ॥
रामसखे प्रिय दृग पलन, तौली सिय छबि मार ।
भई भौंह गाढ़ी कुटिल, सहि न सक्यो अति भार ॥ २७ ॥
जुल्फैं छोड़े बदन पर, मारत राम सुजान ।
रामसखे अब क्यों बनै, जप तप संयम ध्यान ॥ २८ ॥
जिनके हिय पिघले नहीं, देखि रूप सुन तान ।
रामसखे तजिये तुरत, वे नर महा पखान ॥ २९ ॥
काम क्रोध अरु लोभहूँ, तजे होत कछु नाहिं ।
रामसखे दृग रामके, लगे न जो दृग माहिं ॥ ३० ॥
यहाँ रूप की चोट को, करे नहीं दृग कोट ।
रामसखे प्रभु रूप की, सो कँह जाने चोट ॥ ३१ ॥
मिलै द्रब्य पुनि अर्ब लगि, मिलै नृपति अति चाह ।
रामसखे जग रसिक संग, यह दुर्लभ कलिमाह ॥ ३२ ॥
जाग्रत सुख सम रसिक संग, स्वपनो जग सुखसंग ।
रामसखे अस समुझ हीं, जे बूड़े हरिरंग ॥ ३३ ॥
रसिकन के ढिग बैठि के, कर न सकत विधि सान ।
रामसखे जे जगत जिय, तिनको कौन प्रमान ॥ ३४ ॥

मिले संजीवन ज्ञान सुख, और राज्य भरपूर।
समुझे बिना उपासना, रामसखे सब धूर ॥ ३५ ॥
ग्वाल भेष चित चोर हरि, हद सुपुनि नृप भेष।
रामसखे याते भजत, रघुबर नाम बिशेष ॥ ३६ ॥
सीताराम विवाह ते, नातो भयो उदार।
रबि बंशिन के लगत हैं, निमि बंशी सबसार ॥ ३७ ॥
लोभी इष्ट न मानहीं, निरलोभी के प्रान।
तज्यो बिवर प्रभु यादवन, गहि लायो हनुमान ॥ ३८ ॥
सुनि यदुबंशिन मणि कथा, रामसखे मन खेद।
लोभ समान न पाप कछु, करत भक्ति में भेद। ३९ ॥
मणि स्यमंत हित यादवन, प्रभु सो कियो अभाव।
रामसखे जे अपर जिय, तिनको कौन उपाव ॥ ४० ॥
सिय को जिन संकट हरयो, उतरि समुद्र अपार।
रामसखे ताके शरण, मिटत सकल दुख भार ॥ ४१ ॥
परा प्रकृति मकार सिय, रेफ पुरुष पर राम।
रामसखे अपरा तजै, सो पावै निज नाम ॥ ४२ ॥
राम भजे दोऊ मिलें, भुक्ति मुक्ति जग माहिं।
रामसखे सो पेखिये, भुसुंडि विभीषन पाहिं ॥ ४३ ॥

पराचीन वर्हि नृपति, भये यज्ञ जिय काल।
जे भच्छन हित हतत है, तिनके कौन हवाल ॥४४॥
मन्त्र राम तारक बिना, तरै न जिय जग जोय।
रामसखे तिमि नृपति को, यश न नीति बिनु होय ॥४५॥
राम नाम मारग सुखद, रसिकन को प्रचार।
रामसखे सबकी अवधि, जात अवधि भवपार ॥४६॥
बिषय भोग जग स्वप्नवत, समुझि परै मनमाँह।
रामसखे भजु राम को, बन प्रमोद द्रुम छाँह ॥४७॥
कहाँ योग कँह भोग सुख, कहाँ द्रब्य संचार।
प्रभु सो जो अन्तर करै, सो सब डारिय भार ।४८॥
समुझत नहिं धन अन्ध जे, अपनो क्षेम अक्षेम।
रामसखे को नेम यह, तिन सों करत न प्रेम ॥४९॥
राज समर्पण करै सब, कोउ नृप सहित निकेत।
तारक मन्त्र दिये बिना, रामसखे नहिं लेत ॥५०॥
रसिक गुरुन प्रभु रामहित, खर्चत द्रब्य डरात।
अति उदार सुत सुता हित, ते ठग भक्त दिखात ॥५१॥
जाकी आँखिन पीरिया, रोग रह्यो अति छाय।
रामसखे ताको सबै, स्वेत पीत दरसाय ॥५२॥

ब्रह्म जीव के बीच में, जब लगि माया आड़ि।
रामसखे तब लगि नहीं, शुद्ध प्रेम की चाड़ि ॥५३॥
रामसखे यह जगत सुख, गङ्गा कैसी धार।
छिन छिन औरहिं और जल, ताको करो विचार ॥५४॥
सत गुरु तट तरुको, गहै, कुटुम्ब नदी भय खाय।
रामसखे ठहरात तब, सकै न धार बहाय ॥५५॥
जोजिय यह जग आइके करो न घर गोलोक।
रामसखे सो परत पुनि, चौरासी की वोक ॥५६॥
निज घर माझै आपनो, अवध शहर गोलोक।
रामसखे तिनको लगत, जगघर अति दुख वोक ॥५७॥
रामसखे लघु संग सो, भई द्विविद मति हीन।
कुबुद्धि करी बलभद्र सो, जैसोई फल लीन ॥५८॥
पाय कुसंग पतंग तजि, सेवत बाजि खद्योत।
रामसखे ता जीवको, घटो चहत उद्योत ॥५९॥
अन्तर टाटी कपट की. वातें कहत बनाय।
मिल्यौ रहै अरु न मिले, तासो कहा बसाय ॥६०॥
ज्यों लोहो लोहो रह्यो, मिलि पारस पट ओट।
त्यों कपटी सतसङ्ग सो, लहीं न ब्रह्म की चोट ॥६१॥

मलयागिरि के निकट वसि, बाँस न लहत सुवास।
सुधरत नहि ज्यों निरस नर, बसि सन्तन के पास ॥६२॥
गज मुक्तन को ढेर लखि, त्यागत गोड़ गँवार।
रामसखे जाने बिना, पहिरत गुञ्जन हार ॥६३॥
जे स्वांगी ते स्वाँग रत, ते कँह जाने भेद।
रामसखे कह सत असत, कह लवेद कँह वेद ॥६४॥
घर घर डोलत उदर हित, होत जगत में दीन।
रामसखे यह स्वान मत, सन्तन को नहिं लीन ॥६५॥
भेष मात्र को रसिक संग, सुनत महा सुख होय।
रामसखे कहिये बिमल, जिय जिज्ञासी सोय ॥६६॥
पात्र भेद लहि स्वातिकन, मणि कपूर बिष होय।
रामसखे तस मँत्र गति, जान परत जग जोय ॥६७॥
रहत सदा जैसी लगन, बँधन तन धन माह।
रामसखे तैसी रहत, मुक्तिन हरि गुरु चाह ॥६८॥
हरयो सत्य कलियुग प्रबल, ब्यापी जगत अनीत।
रामसखे हरि गुरुन में, रही न नेक प्रतीत ॥६९॥
कलि पंडित योगी तपी, भये रूप तद रूप।
रामसखे कोइ भगि बचे, पगि हरि रूप अनूप ॥७०॥

भावै रम गिरि दरिन में, भावै दारन संग।
रामसखे तब कौन डर, पगे रामके रंग ॥७१॥
त्तनिक बुद्धि उद्वेग मन, होय बिषाद न चित्त।
रामसखे तब जानिये, भये राम अब मित्र ॥७२॥
बस्तु भेद समुझे बिना, निबहत नहीं सनेह।
गजमुक्तन तजि भिलनी, ल्यावत गुञ्जन गेह ॥७३॥
निराकार हरि तनु समुझि, जैसे पुर साकेत।
रामसखे माया रहित, राम धाम इक हेत ॥७४॥
माया रहित भुसुन्डि घर, रामसखे विख्यात।
रामधाम मायिक कहत, ऐसे अधम अघात ॥७५॥
मुक्ति रूप सनकादि लखि, रामसखे साकार।
निराकार शठ कहत हठ, बिनु समझे श्रुतिसार ॥७६॥
ब्रह्म निरबयव बिगत असु, ता बिनु बेद न लेख।
रामसखे पुनि वेद बिनु, ईश्वर पथ क्यों पेख ॥७७॥
अल्प ज्ञान यह जीव को, ब्रह्म सदा सर्वज्ञ।
लहत भेद दिन रात को, कहत एकता अज्ञ ॥७८॥
माध्व भाष्य निज द्वैतमत, मिलन द्वार हनुमान।
रामसखे विधि सम्प्रदा, उड़पी गुरु स्थान ॥७९॥

या मत हनुमत रामको, जियहिं मिलावत आनि।
ब्रह्मा की निज सम्प्रदा, रामसखे सो जानि ॥८०॥
प्रीति चहत हरिजन सुमति, चहत न अनमन अङ्क।
रामसखे तस प्रीति ले, मिल्यौ विभीषन रङ्क ॥८१॥
तनिक छनिक ऐश्वर्य हित, खोवत जन्म गँवार।
रामसखे तिनको नहीं, सत अरु असत बिचार ॥८२॥
नाम रूप गुण तेज बल, निर्गुण धाम परत्व।
बदत वेद सो लहिय पुनि, रामसखे जिय तत्व ॥८३॥
ब्रह्म सम्प्रदा राम पर, मुनि अगस्त्य प्रमान।
भूले ते नहिं जानि हीं, बकत आन की आन ॥८४॥
अरे शिकारी निर्दयी, करियां नृपति किशोर।
क्यों तरसावत दरश बिनु, रामसखे चितचोर ॥८५॥
उदित इन्द्र धनु श्यामघन, देखत सावन मास।
राम रूप बिरहिन लगत, रामसखे अति गाँस ॥७६॥
शोच अर्थ रमु धातु को, अवतारी सिय कन्त।
उत्पति कर्षन आदि लगि, क्रीड़ा राम अनन्त ॥८७॥
इत बहराइच वह जौनपुर, उत गोरखपुर लखन।
रामसखे निज भूमि यह, भनत बेद लखि चखन ॥८८॥

इत सरयू उत गोमती, लखि मन भूमि अनूप।
चतुरँग दल सजि नित रमत, रामसखे हरिभूप ॥८६॥
अवध जीव गोपुर धरे, बड़े भुजन रघुबीर।
रामसखे सो जानहीं, गति भुसुन्डि मतिधीर ॥६०॥
जन्म ब्याह भृगुपति बिजय, राज गमन गोधाम।
रामसखे ऐसे नहीं, चरित कहूँ अभिराम ॥६१॥
राम भजे तनु तरत है, होय कोऊ जग जाति।
रामसखे जाको सदा, जपत शम्भु दिनरात ॥६२॥
चित्रकूट बन कुञ्ज में, बिहरत दशरथ लाल।
रामसखे प्रण बाँधि के, बसे सो होय निहाल ॥६३॥

इति श्रीमद्रामसखेन्द्र निध्याचार्य्य विरचित फुटकर दोहावली समाप्त.।

श्रीस्वामी जानकीशरण कृत दोहे

मत अभेद खँडन करन, मँडन रूप स्वरूप।
भये न अस जग होयगें, रामसखे अनुरूप ॥१॥
रामसखे रसकेलि के, रूप लालची नैन।
अवध बिहारी लाल बिनु, देखे लहै न चैन ॥२॥
राम उपासक रसिक जग, तीन कालहूँ माँहि।
बर बिराग धारन करन, रामसखे सम नाँहि ॥३॥

सब साधन को सिद्ध है, पवन प्रान जग प्रान ।
जपत सकल बाधक मिटत, जानकी जन हनुमान ॥४॥
जानकि जीवन राम प्रिय, रामसखे चितचोर ।
प्रेम सिन्धु हद कमल के, मधुकर युगुल किशोर ॥५॥
जनक नगर में जाइके, रूप ललित रघुलाल ।
हरे सवन के मन नयन, जानकि शरण निहाल ॥६॥
श्री गुरु राम सखेन्द्र को, चरण कमल धरि ध्यान ।
करत मिटत भव ताप सब, जानकि जन गुण खान ॥७॥
बहुत पतित पावन किये, सुमति सुशीला नाम ।
गुरु अनन्यता प्रगट करि, किये जगत अभिराम ॥८॥
जानकि जन हनुमान सम, और देव नहिं कोय ।
जनकनन्दिनी रघुबरहिं, हित कर प्रगटेउ सोय ॥९॥
कौशल्या ब्रत पुन्य से, दशरथ प्रेम प्रभाव ।
कौशलपुर भाइन सहित, प्रगट भयो रघुराव ॥१०॥
सो०-बन्दो परम कृपाल, श्रीमणि मूरति चित्र निधि ।
रामसखे सिय लाल, जिन यश प्रगटेउ ज़गत मधि ॥११
दो०-सरयू निकट अराम मधि, कुञ्ज महल तेहि नाम ।
जानकि जन तँह रासमय, सिया रामको धाम ॥१२॥

षट बिकार को साधि कै, नाम कहैं श्रीराम।
ब्रह्म ग्लानि अनुराग सों, जाँहिं अवध निजधाम ॥१३॥
राम मन्त्र के सुनत ही, भवसागर तरि जाय।
जानकि जन गुरु दया ते, दूसर जन्म कहाय ॥१४॥
रुचिर रचित केशर तिलक, सोहत भाल बिशाल।
रेख युगुल जनु मदन सर, मध्य बिन्दु छबि जाल ॥१५॥
तिलक बिन्दु युग भौंह मधि, अति अद्भुत छबि देत।
मध्य राखि मणि उरग युग, कमल फूल सुख लेत ॥१६॥
कि दोउ के अवलीन अलि, मध्य इन्द्र बधु सोह।
कि अनंग के चाप मधि, बिद्रुम छबि सन्दोह ॥१७॥

इति श्रीस्वामी जानकीशरणकृत फुटकर दोहे समाप्तः।

16766

* सखा भाव *

(१) श्रीराम रसरङ्ग के तरङ्ग में उमंग महाँ,
मत्त मतंग मन कबहुँ निकारैना।
प्यारे के समान निज रूप को प्रमाण मानि,
मान को प्रमाण सानि हरि हूँ बिचारै ना॥
लीन्हें धनुबान पाणि लीलन लुभाने रहे,
छोड़ि गुण गान आन बचन उचारै ना।
परम सुजान सिय जान को सुजान जानि,
सख्य को गुमान छोड़ि दूजो भाव धारैना॥

(२) सैनहीं बुलैहें हँसि कंठ सो लगैहें कबै,
मँजु बतरैहें मोद मनमें सुपाइहौं।
बाजिन के राजीन में राजैं रघुबंशी छैल,
हौं हूँ तुहूँ संग में तुरंग को नचाइहौं॥
भोजन समय सिय नाथ साथ भोजन करि
पोजन सुनाय मंद हाँस्य हीं हँसाइहौं।
पिहौं सुधा माधुरी निहारि नीके नैननसों,
प्यारे नैन कञ्जन की माधुरी पिवाइहौं॥

पुस्तक मिलने का पता—
महन्त श्रीसियाशरणजी महाराज
नृत्यराघवकुञ्ज वासुदेवघाट श्रीअयोध्याजी।
दूसरा पता—सेठ छोटेलाल लक्ष्मीचन्द श्रीअयोध्याजी।